वार्षिक रु. १६०, मूल्य रु. १७

ISSN 2582-0656

विवेक ज्योति

रामकृष्ण मिशन
विवेकानन्द आश्रम
रायपुर (छ.ग.)

वर्ष ६० अंक ११
नवम्बर २०२२

* आत्मनो मोक्षार्थं जगद्धिताय च *

वर्ष ६०

अंक ११

विवेक-ज्योति

श्रीरामकृष्ण-विवेकानन्द भावधारा से अनुप्राणित

हिन्दी मासिक

प्रबन्ध सम्पादक
स्वामी अव्ययात्मानन्द

व्यवस्थापक
स्वामी स्थिरानन्द

सम्पादक
स्वामी प्रपत्त्यानन्द

सह-सम्पादक
स्वामी पद्माक्षानन्द

कार्तिक, सम्वत् २०७९

नवम्बर, २०२२

अनुक्रमणिका

* भारत का मेरुदण्ड केवल धर्म है : विवेकानन्द ४८६
* स्वामी विवेकानन्द और महात्मा गाँधी (स्वामी निखिलेश्वरानन्द) ४८९
* (बच्चों का आंगन) मुश्किल समय में हिम्मत न हारो (श्रीमती मिताली सिंह) ४९७
* डुबकी लगाओ (भिक्षु विशुद्धपुत्र) ४९८
* (युवा प्रांगण) हे युवको ! अपना विकास स्वयं करो (स्वामी गुणदानन्द) ५०५
* अध्यात्म जीवन में परम आवश्यक : ईश्वर स्मरण (स्वामी सत्यरूपानन्द) ५२१
* (कविता) माँ काली का ध्यान करो (ओमप्रकाश वर्मा) ४९६
* (कविता) ईश्वर ही हैं जीवन के धन (मोहन सिंह मनराल) ४९६
* विवेकानन्द वन्दना (रामकुमार गौड़) ५११
* पुस्तक समीक्षा ५२२

शृंखलाएँ

मंगलाचरण (स्तोत्र) ४८५
पुरखों की थाती ४८५
सम्पादकीय ४८७
सारगाछी की स्मृतियाँ ४९४
श्रीरामकृष्ण-गीता ४९६
प्रश्नोपनिषद् ५०८
आध्यात्मिक जिज्ञासा ५०९
गीतातत्त्व-चिन्तन ५१२
रामराज्य का स्वरूप ५१४
साधुओं के पावन प्रसंग ५१७
समाचार और सूचनाएँ ५२४

रामकृष्ण मिशन विवेकानन्द आश्रम, रायपुर – ४९२००१ (छ.ग.)

विवेक-ज्योति दूरभाष : **०९८२७१ ९७५३५** (फोन करने का समय केवल सुबह १० से १२)
ई-मेल : **vivekjyotirkmraipur@gmail.com,** वेबसाइट : ***www.rkmraipur.org***
आश्रम कार्यालय : ०७७१ – २२२५२६९, ४०३६९५९ (समय : ८.३० से ११.३० और ३ से ६ बजे तक)
रविवार एवं अन्य अवकाश को छोड़कर

ISSN 2582-0656

विवेक-ज्योति के सदस्य कैसे बनें

भारत में	वार्षिक	५ वर्षों के लिए	१० वर्षों के लिए
एक प्रति १७/–	१६०/-	८००/-	१६००/-
विदेशों में (हवाई डाक से)	५० यू.एस. डॉलर	२५० यू.एस. डॉलर	
संस्थाओं के लिये	२००/–	१०००/–	

* सदस्यता-शुल्क की राशि इलेक्ट्रॉनिक या साधारण मनिआर्डर से भेजें अथवा **ऐट पार** चेक – **'रामकृष्ण मिशन'** (रायपुर, छत्तीसगढ़) के नाम बनवाकर रामकृष्ण मिशन विवेकानन्द आश्रम रायपुर (छ.ग.) ४९२००१ के नाम स्पीड पोस्ट से भेज दें अथवा निम्नलिखित खाते में सीधे जमा करायें :

बैंक का नाम : सेन्ट्रल बैंक ऑफ इंडिया
अकाउण्ट का नाम : रामकृष्ण मिशन, रायपुर
शाखा का नाम : रायपुर (छत्तीसगढ़)
अकाउण्ट नम्बर : 1 3 8 5 1 1 6 1 2 4
IFSC : CBIN0280804

विवेक-ज्योति कोष/स्थायी कोष

दान दाता	दान-राशि
श्री सुनील कुमार गुप्ता,विकासपुरी,नईदिल्ली	५,१००/-

* कृपया सदस्यता राशि जमा करने के बाद इसकी सूचना हमें तुरन्त **फोन, मोबाईल, एस.एम.एस., व्हाट्सएप, ई-मेल** अथवा **स्कैन द्वारा अपना नाम, पूरा पता, पिन कोड नं.** के साथ भेजें ।
* विवेक-ज्योति पत्रिका के सदस्या किसी भी माह से बन सकते हैं ।
* पत्रिका को निरन्तर चालू रखने हेतु अपनी सदस्यता की अवधि पूर्ण होने के पूर्व ही नवीनीकरण करा लें ।
* विवेक-ज्योति कार्यालय से प्रतिमाह सभी सदस्यों को एक साथ पत्रिका प्रेषित की जाती है । डाक की अनियमियता के कारण कई बार पत्रिका सदस्यों को नहीं मिलती है, अत: पत्रिका प्राप्त न होने पर अपने समीप के डाक विभाग से सम्पर्क एवं शिकायत करें । इससे कई सदस्यों को पत्रिका मिलने लगी है । पत्रिका न मिलने की शिकायत माह के अंत में ही करें । अंक उपलब्ध होने पर ही पुन: प्रेषित किया जायेगा ।
* सदस्यता, एजेन्सी, विज्ञापन एवं अन्य विषयों की जानकारी के लिए 'व्यस्थापक, विवेक-ज्योति कार्यालय' को लिखें ।

नवम्बर माह के जयन्ती और त्यौहार

०५ स्वामी सुबोधानन्द
०७ स्वामी विज्ञानानन्द
०८ गुरु नानक
१४ बाल दिवस
४,२० एकादशी

विवेक-ज्योति के अंक ऑनलाइन नि:शुल्क पढ़ें : www.rkmraipur.org

'vivek jyoti hindi monthly magazine' के नाम से **अब विवेक-ज्योति पत्रिका यू-ट्यूब चैनल पर सुनें**

आवरण-पृष्ठ के सम्बन्ध में

श्रीश्रीजगद्धात्री माँ की मूर्ति भोपाल आश्रम की है। १९९२ ई. से रामकृष्ण आश्रम, भोपाल में प्रतिवर्ष श्रीश्रीजगद्धात्री पूजा मनायी जाती है। २००६ से पहले यह पूजा ५ दिनों तक मनायी जाती थी। २००६ से ३ दिनों तक मनायी जाती है। ०१.०८.२००६ को इस आश्रम को बेलूड़ मठ द्वारा अधिग्रहण किया गया। उसके उपरान्त 'रामकृष्ण आश्रम' का नाम परिवर्तित करके 'रामकृष्ण मिशन आश्रम', भोपाल किया गया। इस आश्रम द्वारा 'विवेकानन्द विद्यापीठ' नामक विद्यालय संचालित किया जाता है। इसके साथ नि:शुल्क आदिवासी छात्रावास भी है। आश्रम में नित्य पूजा, अन्य पूजा-उत्सव, फीजियोथेरेपि, पुस्तक विक्रय-केन्द्र है तथा आश्रम द्वारा विभिन्न राहत कार्य किये जाते हैं।

क्रमांक	विवेक ज्योति पुस्तकालय योजना के सहयोग कर्ता	प्राप्त-कर्ता (पुस्तकालय/संस्थान)
६९२.	श्री सुरेशचन्द्र शर्मा, जोधपुर (राज.)	शास. प्राथमिक शाला कोकड़ी,पो.खट्टा, जि.-महासमुन्द (छ.ग.)

विवेक ज्योति पुस्तकालय योजना

मनुष्य का उत्थान केवल सकारात्मक विचारों के प्रसार से करना होगा। – स्वामी विवेकानन्द

❖ क्या आप स्वामी विवेकानन्द के स्वप्नों के भारत के नव-निर्माण में योगदान करना चाहते हैं?

❖ क्या आप अनुभव करते हैं कि भारत की कालजयी आध्यात्मिक विरासत, नैतिक आदर्श और महान संस्कृति की युवकों को आवश्यकता है?

✓ यदि हाँ, तो आइए! हमारे भारत के नवनिहाल, भारत के गौरव छात्र-छात्राओं के चारित्रिक-निर्माण और प्रबुद्ध नागरिक बनने में सहायक 'विवेक-ज्योति' को प्रत्येक पुस्तकालय में पहुँचाने में सहयोग कीजिए। आप प्रत्येक पुस्तकालय में पहुँचाने वाली हमारी इस योजना में सहयोग कर अपने राष्ट्र की सेवा कर सकते हैं। आपका प्रयास हमारे इस महान योजना में सहायक होगा, हम आपके सहयोग की प्रतीक्षा कर रहे हैं –

✍ १. 'विवेक-ज्योति' को विशेषकर भारत के स्कूल, कॉलेज, महाविद्यालय और विश्वविद्यालयों द्वारा युवकों में प्रचारित करने का लक्ष्य है।

✍ २. एक पुस्तकालय हेतु **मात्र १८००/-** रुपये सहयोग करें, इस योजना में सहयोग-कर्ता के द्वारा सूचित किए गए सामुदायिक ग्रन्थालय, या अन्य पुस्तकालय में **१० वर्षों तक 'विवेक-ज्योति'** प्रेषित की जायेगी।

✍ ३. यदि सहयोग-कर्ता पुस्तकालय का नाम चयन नहीं कर सकते हैं, तो हम उनकी ओर से पुस्तकालय का चयन कर देंगे। दाता का नाम पुस्तकालय के साथ 'विवेक-ज्योति' में प्रकाशित किया जाएगा। यह योजना केवल भारतीय पुस्तकालयों के लिये है।

❖ आप अपनी सहयोग-राशि इलेक्ट्रॉनिक मनीआर्डर या एट पार चेक 'रामकृष्ण मिशन' (रायपुर, छत्तीसगढ़) के नाम से बनवाकर पत्र के साथ निम्नलिखित पते पर भेज दें, जिसमें 'विवेक ज्योति पुस्तकालय योजना' हेतु लिखा हो। आप अपनी सहयोग-राशि निम्नलिखित खाते में सीधे जमा कर सकते हैं। आप इसकी सूचना ई-मेल, फोन और एस. एम.एस. द्वारा अपना नाम, पूरा पता, पिन कोड एवं फोन नम्बर के साथ भेजें।

सेन्ट्रल बैंक ऑफ इन्डिया, अकाउन्ट नम्बर : 1385116124, IFSC CODE : CBIN0280804

पता – **व्यवस्थापक, विवेक-ज्योति कार्यालय, रामकृष्ण मिशन विवेकानन्द आश्रम,**
रायपुर - 492001 (छत्तीसगढ़), दूरभाष – 09827197535, 0771-2225269, 4036959
ई-मेल : vivekjyotirkmraipur@gmail.com, वेबसाइट : www.rkmraipur.org

विवेक-ज्योति स्थायी कोष

'विवेक-ज्योति' पत्रिका स्वामी विवेकानन्द जी की जन्म-शताब्दी वर्ष के शुभ अवसर पर १९६३ ई. में आरम्भ की गई थी। तबसे यह पत्रिका निरन्तर आध्यात्मिक, सांस्कृतिक और नैतिक विचारों के प्रचार-प्रसार द्वारा समाज को सदाचार, नैतिक और आध्यात्मिक जीवन यापन में सहायता करती चली आ रही है। यह पत्रिका सदा नियमित और सस्ती प्रकाशित होती रहे, इसके लिये विवेक-ज्योति के स्थायी कोष में उदारतापूर्वक दान देकर सहयोग करें। आप अपनी दान-राशि इलेक्ट्रॉनिक मनीआर्डर, ऐट पार चेक या सीधे बैंक के खाते में उपरोक्त निर्देशानुसार भेज सकते हैं। प्राप्त दान-राशि (न्यूनतम रु. १०००/-) सधन्यवाद सूचित की जाएगी और दानदाता का नाम भी पत्रिका में प्रकाशित होगा। रामकृष्ण मिशन को प्रदत्त सभी दान आयकर अधिनियम-१९६१, धारा-८०जी के अन्तर्गत आयकर मुक्त है।

सुदर्शन सोलार...
ऊर्जा अपरंपार !

आधुनिक भारत की बिजली की बढ़ती हुई आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए हमारे पास पर्याप्त मात्रा में सौर ऊर्जा उपलब्ध है। प्राकृतिक रुप से उपलब्ध इस स्त्रोत का प्रतिदिन की अपनी आवश्यकताओं के लिये उपयोग करके, अपने बिजली के बिल में भारी पैमाने पर कटौती कर, हम अपने देश को बिजली के निर्माण में आत्मनिर्भर बनाने में सहायता कर सकते हैं।

इस सुन्दर भूमि को सदा हरी-भरी रखने के लिये अपना साथी

भारत का विश्वसनीय सौर ऊर्जा ब्रांड - 'सुदर्शन सौर'!

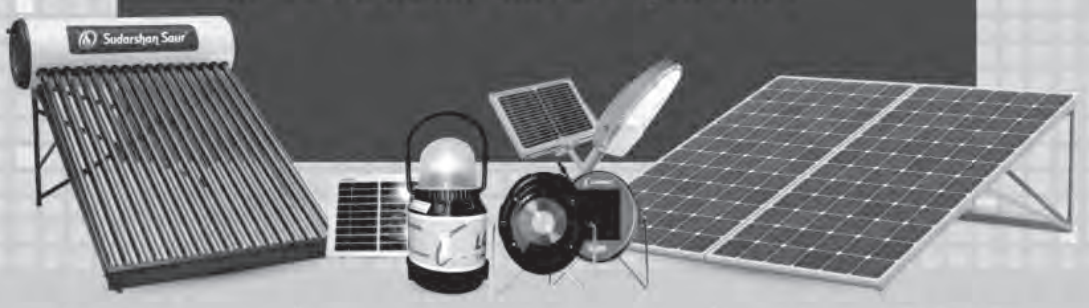

सोलर वॉटर हीटर
24 घंटे गरम पानी के लिए

सोलर लाइटिंग्स
ग्रामीण क्षेत्र में घरेलू उपयोग के लिए

सोलार इलेक्ट्रिसिटी सिस्टम
रुफटॉप सोलार
बिजली उत्पन्न करने के लिए

घर, बंगलोज, हॉस्पिटल्स, हॉटेल्स, इंडस्ट्रीज, कमर्शिअल कॉम्प्लेक्स, इन्स्टिट्यूट्स के लिए उपयुक्त

समझदारी की सोच!

३० साल का प्रदीर्घ अनुभव!

आजीवन सेवा — लाखां संतुष्ट ग्राहक — विस्तृत डीलर नेटवर्क

Sudarshan Saur®

www.sudarshansaur.com | Toll Free 1800 233 4545 | E-mail: office@sudarshansaur.com

। । आत्मनो मोक्षार्थं जगद्धिताय च । ।

विवेक-ज्योति

श्रीरामकृष्ण-विवेकानन्द भावधारा से अनुप्राणित

हिन्दी मासिक

वर्ष ६० **नवम्बर २०२२** **अंक ११**

श्रीजगद्धात्री-स्तोत्रम्

आधारभूते चाधेये धृतिरूपे धुरन्धरे।
ध्रुवे ध्रुवपदे धीरे जगद्धात्रि नमोऽस्तु ते।।
शवाकारे शक्तिरूपे शक्तिस्थे शक्तिविग्रहे।
शाक्ताचारप्रिये देवि जगद्धात्रि नमोऽस्तु ते।।

– हे जगद्धात्रि ! आप आधारस्वरूपिणी एवं आधेयस्वरूपिणी हो, आप धारणशक्तिरूपिणी एवं सर्वकर्म-विधात्री (अथवा सर्वोत्तमा) हो, आप सनातनी, शाश्वतधाम-रूपिणी तथा अविचलित-स्वभावा हो, आपको नमस्कार।।१।।

हे जगद्धात्रि ! आप ही शवरूपिणी (अर्थात् निर्गुण शिवरूपिणी) तथा आप ही शक्ति हो, आप समस्त शक्तियों में अवस्थिता हो एवं आप ही शक्ति की मूर्त विग्रह हो, आप शाक्तोचित आचार से सन्तुष्ट होती हो, हे देवी ! आपको नमस्कार।।२।।

पुरखों की थाती

गत-वयसामपि पुंसां येषामर्था भवन्ति ते तरुणाः।
अर्थे तु ये हीना वृद्धास्ते यौवनेऽपि स्युः।।७७८।।

(पंचतंत्र)

– जिन लोगों के पास धन होता है, वे ढलती आयु में भी जवान बने रहते हैं, परन्तु जो लोग निर्धन हैं, वे युवावस्था में ही वृद्ध हो जाते हैं।

गुरवो बहवः सन्ति शिष्य-वित्तापहारकाः।
तमेकं दुर्लभं मन्ये शिष्यहृत्तापहारकम्।।७७९।।

(गुरुगीता)

– शिष्यों के धन का हरण करनेवाले गुरु तो बहुत मिलते हैं, परन्तु शिष्य के हृदय का सन्ताप हरनेवाले गुरु अत्यन्त दुर्लभ होते हैं।

चला लक्ष्मीश्चलाः प्राणाश्चले जीवित-यौवनम्।
चलाचले च संसारे धर्म एको हि निश्चलः।।७८०।।

– धन-सम्पदा चंचल है, प्राण-वायु चंचल है, यौवन तथा जीवन चंचल हैं। जिस संसार में सब कुछ चल-अचल है, उसमें एकमात्र धर्म ही निश्चल रहता है।

भारत का मेरुदण्ड केवल धर्म है – विवेकानन्द

हिन्दू का खाना धार्मिक, पीना धार्मिक, सोना धार्मिक, उसकी चाल-ढाल धार्मिक, विवाह आदि धार्मिक और यहाँ तक कि उसकी चोरी करने की प्रेरणा भी धार्मिक होती है।... इसका एक ही कारण है और वह यह कि इस देश की प्राणशक्ति, इसका ध्येय धर्म है और चूँकि धर्म पर आघात नहीं हुआ, इसीलिए यह देश अभी तक जीवित है।

भारत में माँ ही परिवार का केन्द्र और हमारा सर्वोच्च आदर्श है। वह हमारे लिये ईश्वर की प्रतिनिधि है, क्योंकि ईश्वर ब्रह्माण्ड की माँ हैं। एक नारी-ऋषि ने ही सबसे पहले ईश्वर की एकता की अनुभूति की और यह सिद्धान्त वेदों की प्रारम्भिक ऋचाओं में व्यक्त किया।... जो प्रार्थना से जन्म लेता है, वही आर्य है और जिसका जन्म कामुकता से होता है, वह अनार्य है।... भारत में यह बात इतनी गम्भीरता से स्वीकृत हो गई है कि वहाँ यदि विवाह की परिणति प्रार्थना में न हो, तो हम विवाह में भी व्यभिचार की बात कहते हैं।... यह सतीत्व ही हमारे राष्ट्र का रहस्य है।

संसार हमारे देश का अत्यन्त ऋणी है। जब मैं अपने देश के प्राचीन इतिहास का सिंहावलोकन करता हूँ, तो सम्पूर्ण विश्व में मुझे ऐसा कोई भी देश नहीं दिखता, जिसने मानवीय हृदय को उन्नत और सुसंस्कृत बनाने में भारत के समान चेष्टा की हो। इसलिए, न तो मैं अपनी हिन्दू जाति को दोषी ठहराता हूँ और न इसकी निन्दा करता हूँ। मैं तो कहता हूँ – तुमने जो कुछ किया है, अच्छा किया है, पर इससे भी अच्छा करने की चेष्टा करो।

प्राच्य और पाश्चात्य राष्ट्रों में घूमकर मुझे जगत का कुछ अनुभव प्राप्त हुआ है। मैंने सर्वत्र सब देशों का कोई-न-कोई ऐसा आदर्श देखा है, जिसे उस देश का मेरुदण्ड कह सकते हैं। कहीं राजनीति, कहीं समाज-संस्कृति, कहीं मानसिक उन्नति और इसी प्रकार कुछ-न-कुछ प्रत्येक के मेरुदण्ड का काम करता है। परन्तु हमारी मातृभूमि भारतवर्ष का मेरुदण्ड धर्म, केवल धर्म ही है। धर्म के ही आधार पर, उसी की नींव पर, हमारे राष्ट्रीय जीवन का प्रासाद खड़ा है।

भारत की वह प्राण-शक्ति अब भी आक्रान्त नहीं हुई है। भारतवासियों ने उसका त्याग नहीं किया है और अन्धविश्वासों के बावजूद वह आज भी सबल है। यहाँ भयानक अन्धविश्वास है और उनमें से कुछ तो अत्यन्त जघन्य तथा घृणास्पद हैं, परन्तु उनकी चिन्ता मत करो, क्योंकि हमारी राष्ट्रीय जीवन-धारा – हमारा राष्ट्रीय ध्येय अभी भी जीवित है।...

भारत, मृत्यु की भाँति दृढ़तापूर्वक ईश्वर, केवल ईश्वर से चिपका हुआ है, इसीलिए उसके लिए अभी भी आशा है।

यदि पृथ्वी पर ऐसा कोई देश है, जिसे हम धन्य पुण्य-भूमि कह सकते हैं, यदि ऐसा कोई देश है, जहाँ मानव जाति का क्षमा, धैर्य, दया, शुद्धता आदि सद्वृत्तियों का सर्वाधिक विकास हुआ है और यदि ऐसा कोई देश है, जहाँ आध्यात्मिकता तथा सर्वाधिक आत्मान्वेषण का विकास हुआ है, तो वह भूमि भारत ही है।

इन चरित्रों का अध्ययन करने पर तुमको सहज ही बोध होने लगता है कि भारतीय और पाश्चात्य आदर्शों में कितना अन्तर है।... पश्चिम कहता है – ''कर्म करो कर्म द्वारा अपनी शक्ति दिखाओ।'' भारत कहता है – ''सहनशीलता द्वारा अपनी शक्ति दिखाओ।'' पश्चिम ने इस समस्या का समाधान किया है कि मनुष्य कितनी अधिक वस्तुओं का स्वामी बन सकता है, परन्तु इस प्रश्न का उत्तर भारत ने दिया है कि मनुष्य कितने अल्प में जीवनयापन कर सकता है।

(मेरा भारत अमर भारत १५-१७)

सम्पादकीय
बाल दिवस विशेष

बच्चों को उपहार में सुसंस्कार दीजिये

एक दिन वाट्सअप में एक वीडियो मेरे पास आया। मैंने देखा कि उसमें एक ३-४ वर्ष का छोटा बच्चा ढोल बजा रहा है और उसके पिताजी घंटी बजाकर अपने घर में भगवान की आरती कर रहे हैं। मैं उसे पहचान नहीं सका। पूछने पर उसके पिताजी ने बताया कि महाराज ! ये मेरा साकेत है, जब छोटा था, तभी से इसे मैंने धार्मिक क्रिया-कलापों से जोड़ा है। आज मुझे सन्तुष्टि है कि मेरा लड़का सही दिशा में है। सचमुच उच्च शिक्षा प्राप्त कर, विदेश भ्रमण करने के बाद भी बड़ी निष्ठा से वह अपना व्यवसाय सम्भाल रहा है और अपने माता-पिता, परिजनों पर श्रद्धा करता है। धार्मिक और सामाजिक गतिविधियों में भी वह बड़ी शान्ति से उत्तरदायित्व लेकर सफलता से काम करता है। इसे कहते हैं, बचपन से अच्छे संस्कार देना।

बृहत् हिन्दी शब्दकोष में संस्कार के बहुत से अर्थ दिये गये हैं, जिनमें से कुछ का उल्लेख कर रहे हैं – साथ रखना, व्यवस्थित रखना, सजाना, पूरा करना, सुधारना, शुद्धि, सफाई, भोजन करना, धातु की चीजें माँजकर चमकाना, पौधों, जानवरों आदि का पालन-पोषण, स्नान करना, मानसिक शिक्षा, मनोवृत्ति स्वभाव आदि का परिष्कार, शुद्ध करनेवाला कोई कृत्य, स्मरण शक्ति, मन पर पड़ी हुई छाप, धारणा आदि।

वह संस्कार ही है, जिससे हमारे चरित्र का निर्माण होता है, जो हमेशा हमारे साथ रहता है। जैसे सत्य बोलना, बड़ों का श्रद्धा-सम्मान करना, परोपकार करना, भगवान की भक्ति करना, ये अच्छे संस्कार सदा हमारे साथ रहकर विभिन्न परिस्थितियों में हमारी रक्षा करते हैं, हमें दिशा-निर्देश देते हैं।

संस्कार हमें जीवन में व्यवस्थित रहना सिखाता है। प्रत्येक बच्चों को बचपन से यह संस्कार देना चाहिये कि वे अपनी सामग्री स्वच्छ और व्यवस्थित रखें। राजस्थान, जोधपुर में एक दो वर्ष की बच्ची वाणीश्री को देखा था, वह अपने दादाजी को कह रही थी, चप्पल यहाँ रखिये। मैं दिनभर सब सामान ठीक करती हूँ और आपलोग कहीं भी कुछ भी रख दे रहे हैं। उस छोटी बच्ची में सामान व्यवस्थित रखने की बड़ी रुचि थी। इधर-उधर कोई सामान रखने पर वह अपने घर के लोगों को डाँटती थी। इस छोटी नयी व्यवस्थापिका से सब लोग अपना सामान ठीक जगह पर रखते और उसका आनन्द भी लेते थे। उसके दादाजी के द्वारा चप्पल सही जगह पर रखकर गलती सुधार लेने पर उस बच्ची ने कहा, अब आया ऊँट पहाड़ ने नीचे। यह है घर की सामग्रियों को सजाकर व्यवस्थित रखने का संस्कार। तीन वर्ष का ओम बहुत साफ कपड़े पहनता है और चाकलेट खाने के बाद कागज को डस्टबीन में स्वयं जाकर फेंक देता है, इधर-उधर नहीं फेंकता।

अभिभावकों को अपने बच्चों को स्वयं साफ-सुथरा रहने का संस्कार देना चाहिये। बच्चे नित्य स्नान करें, कपड़े साफ रखें, गन्दे कपड़े न पहनें, जूते-मोजे साफ रखें, हाथ-मुँह पोंछने के लिये रूमाल रखें, पैर धोकर बिस्तर पर जायें आदि, ये उन्हें सिखाना चाहिये और उसका नित्य अभ्यास कराना चाहिये। एक बार मैं एक सम्बन्धी के यहाँ बैठा हुआ था। कुछ देर बाद उन्होंने अपने ३ वर्ष के नाती से कहा, बाबू ! मेरे लिए पीने का पानी ले आओ। बच्चा पानी देकर चला गया। उन्होंने पानी पीया नहीं, फेंक दिया। मेरे पूछने पर उन्होंने कहा कि मैं इसे आज्ञाकारी होने का संस्कार दे रहा हूँ कि मेरे माँगने पर वह कुछ सामान लाकर दे सके।

सामूहिक खेल को प्रोत्साहन – बच्चों के शारीरिक और मानसिक विकास हेतु सामूहिक खेल – अन्य बच्चों के साथ खेलने को प्रोत्साहित करें। इससे उनका शरीर सबल, मन सक्रिय होगा और दूसरे बच्चों के साथ वे सामंजस्य स्थापित करना सीखेंगे।

पढ़ने का संस्कार – बच्चों को पढ़ने का संस्कार दें। इसके लिये तो प्राय: प्रबुद्ध अभिभावक प्रयत्नशील रहते हैं। स्कूल जाने के पहले ही लोग बच्चों को बहुत-सी बातें सीखाते हैं। कुछ बच्चे अपने भाई-बहनों को पढ़ते देखकर

स्वयं ही पढ़ने बैठ जाते हैं। मैंने देखा, दो साल का बच्चा एक मोटी पुस्तक लेकर अपने चाचाजी के साथ पढ़ने बैठ गया और उनके जैसा पन्ना उलटने लगा। बहुत से श्रमिक अभिभावक या अन्य लोग भी हैं, जिनके घरों में पढ़ने का वातावरण नहीं होता, ऐसी स्थिति में बच्चे कोचिंग सेन्टर या दूसरे के घरों में जाकर पढ़ते हैं। इसीलिये शहरों में अब अध्ययन केन्द्र खुल रहे हैं, जहाँ बच्चे अपनी पाठ्यपुस्तकों का घर के कोलाहल से दूर शान्ति से अध्ययन कर सकें। अत: जिनके घरों में सुविधायें हैं, उन्हें बच्चों को घर में पढ़ने का एक स्वस्थ वातावरण देना चाहिये, जिससे बच्चे-बच्चियाँ घर में पूर्ण सुरक्षित बोध करते हुये पारिवारिक स्नेहिल वातावरण में समयानुसार अध्ययन कर सकें।

बच्चों की प्रतिभा को स्वभावत: प्रस्फुटित होने का स्वस्थ वातावरण दें

१९९१ में वेद सम्मेलन, द्वारिका में मैंने देखा था, एक साढ़े तीन वर्ष के बच्चे को गोद में उठाकर लाया गया। उसने ५०-६० से अधिक कठिन वैदिक मन्त्र सुनाये। १९९२ में विवेकानन्द केन्द्र, कन्याकुमारी द्वारा आयोजित विवेकानन्द भारत परिक्रमा के समय प्रयाग में मैंने देखा, एक चार साल का बच्चा मंच पर तबला बजा रहा था और उसके पिताजी भजन गा रहे थे। आजकल यूट्यूब पर बहुत-से छोटे-छोटे बच्चे अपनी स्मृतिशक्ति और कला का परिचय देते मिलते हैं। पटना की दो वर्ष की लक्ष्मी देश का नाम लेते ही मानचित्र में अंगुली से बता देती थी कि यह देश यहाँ है। एक ढाई वर्ष का बच्चा है, जो किस देश की राजधानी कहाँ है, पूछने पर शीघ्र बता देता है। बच्चों में प्रतिभा है, आप उसे यथासमय स्वभावत: अभिव्यक्त होने का उचित सुअवसर और वातावरण दीजिये।

बच्चों में परोपकार की भावना का विकास करें

बच्चों में स्वार्थी न बनकर दूसरों को कुछ देने की भावना का विकास करना सिखायें। आपको ज्ञात है कि बच्चे बड़ों को देखकर बहुत-सी बातें सीखते हैं। संस्कारी लोग बड़े होने पर प्राप्त उपलब्धियों को अपने माता-पिता-परिजनों से प्राप्त संस्कारों को श्रेय देते हैं। वाराणसी में काशी हिन्दू विश्वविद्यालय के एक विद्वान थे। उनके यहाँ हमेशा दो-चार अतिथि भोजन करते ही थे। वर्षा का मौसम था। एक दिन १ बज गया। घर के लोगों ने कहा कि आप भोजन कर लीजिये। उन्होंने कहा कि आज तक बिना किसी अतिथि को खिलाये भोजन नहीं किया हूँ, तो अभी कैसे कर लूँ। तब तक एक व्यक्ति किसी काम से पहुँचा, परिवारवालों ने कहा, दादाजी भोजन नहीं कर रहे हैं, तुम भोजन कर लो, तो वे तुम्हारे साथ करेंगे। उन पंडितजी ने उन सज्जन के साथ भोजन करना स्वीकार किया। यह है सत्संस्कार।

वाराणसी में एक कुलपति थे। एक बार उन्होंने मुझे कहा था कि ब्राह्मण का जन्म केवल देने के लिये होता है। मैं प्रात:काल सन्ध्या-वन्दन में अपनी भावना-भक्ति ईश्वर को समर्पित करता हूँ। उसके बाद छात्रों को नि:शुल्क विद्यादान करता हूँ। उन्होंने अपने जीवन में हजारों नौकरियाँ देकर लोगों के जीवन को सुखमय किया था। उन्होंने कहा कि पिताजी जमींदार थे, प्रात: गरीबों को दान देते थे, श्रमिकों को काम देते थे। उनको देखकर मुझे लोगों की सेवा की प्रेरणा मिली। इसीलिये घरों में विशेष दिनों में बच्चों के हाथ से दान कराया जाता है, मन्दिरों में बच्चों के हाथ से प्रसाद, पैसा चढ़वाया जाता है, रक्षाबन्धन और अन्य उत्सवों में बच्चों के हाथ से बहनों को उपहार, रुपये दिलवाये जाते हैं। ताकि बच्चों में कुछ देने की भावना का विकास हो।

बच्चों में सामाजिक, राष्ट्रीय चेतना का विकास

बच्चे परिवार और समाज के सहयोग से पलते-बढ़ते हैं, तो उन्हें परिवार के साथ-साथ सामाजिक दायित्व का भी बोध होना चाहिये। आप देखते हैं, जब स्कूल में और गाँव में, मुहल्लों में दुर्गापूजा, सरस्वती पूजा, स्वतन्त्रता दिवस, गणतन्त्र दिवस होता है या किसी के घर में विवाह आदि होता है, तो किशोर वय के बच्चे भी उसमें भाग लेते हैं, मूर्ति सजाते हैं, पूजा की व्यवस्था, अतिथियों की सेवा आदि कार्य करते हैं। इन सब क्रिया-कलापों से बच्चे व्यक्तिगत स्तर से ऊपर ऊठकर अपने में सामाजिक और राष्ट्रीय चेतना का विकास करते हैं।

बच्चे केवल पाठ्यपुस्तकों के कीड़े न बन जायें, केवल परीक्षा में अधिकाधिक नम्बर लाने तक सीमित न रह जायें,

शेष भाग पृष्ठ ५०७ पर

स्वामी विवेकानन्द और महात्मा गाँधी

स्वामी निखिलेश्वरानन्द

सचिव, रामकृष्ण आश्रम, राजकोट

(गतांक से आगे)

प्रारम्भ से ही रामकृष्ण मिशन में अस्पृश्यता निवारण का काम शान्तिपूर्वक, सहज भाव से किया गया। भिन्न-भिन्न जाति के लोग एक ही पंक्ति में भोजन ग्रहण करते हुये

रामकृष्ण परमहंस की इस उक्ति को 'भक्तों की कोई जाति नहीं होती' चरितार्थ करते हैं। श्रीरामकृष्ण मठ, मद्रास द्वारा संचालित अस्पृश्यों की एक संस्था की गाँधीजी से दिसम्बर, १९३३ में भेंट हुई थी। उस समय उन्होंने कहा था – हिन्दू धर्म में रामकृष्ण मिशन आत्मशुद्धि का आन्दोलन है। इस भेंट के बाद ही गाँधीजी ने हरिजनों के मन्दिर-प्रवेश का आन्दोलन किया था। २९ अक्तूबर, १९२० के 'यंग इन्डिया' में गाँधीजी ने लिखा – 'स्वामी विवेकानन्द पतितों को दलित कहते थे। नि:संदेह स्वामीजी द्वारा प्रयुक्त यह विशेषण उपयुक्त है। हमने उन्हें बहुत कुचला है, बहुत सताया है और ऐसा करके हम स्वयं दलित सिद्ध हुये हैं।'

स्वामीजी की तरह गाँधीजी भी ईसाई मिशनरी द्वारा हो रहे अन्त्यजों के धर्मान्तरण के विरुद्ध थे। कोट्टयम के श्रीरामकृष्ण मन्दिर में १९.१.१९३७ को दिये गये प्रवचन में उन्होंने कहा – ''जिस धर्म में रामकृष्णदेव, चैतन्य महाप्रभु, शंकराचार्य एवं स्वामी विवेकानन्द जैसे महापुरुष अवतरित हुये हैं, वह धर्म केवल कुसंस्कारों की छवि नहीं हो सकता।'' एक ईसाई उपदेशक से उलझते हुये गाँधीजी ने कह दिया – ''जब आप अन्त्यजों से यह कहते हैं कि रामकृष्ण को छोड़कर आपको ईसा मसीह को अपनाना होगा, तब आप निश्चित ही अपने लिये संकट मोल ले रहे हैं।''

भारतीय संस्कृति की अस्मिता

भारतीय संस्कृति की गरिमा को स्वामीजी और गाँधीजी दोनों भलीभाँति समझ रहे थे। दोनों को पश्चिम के अन्धानुकरण से घृणा थी। स्वामीजी की तरह गाँधीजी भी शंकराचार्य, चैतन्य, कबीर, नानक जैसे महात्माओं को देश के सच्चे नेता मानते थे। भारतीयों को सम्बोधित करते स्वामीजी ने लिखा –

हे भारत ! तुम मत भूलना कि तुम्हारी स्त्रियों का आदर्श सीता, सावित्री, दमयन्ती है; मत भूलना कि तुम्हारे उपास्य सर्वत्यागी उमानाथ शंकर है; मत भूलना कि तुम्हारा विवाह, धन और तुम्हारा जीवन इन्द्रिय-सुख के लिए, अपने व्यक्तिगत सुख के लिए नहीं है; मत भूलना कि तुम जन्म से ही 'माता' के लिए बलिस्वरूप रखे गये हो; मत भूलना कि तुम्हारा समाज उस विराट् महामाया की छाया मात्र है; तुम मत भूलना कि नीच, अज्ञानी, दरिद्र, चमार और मेहतर तुम्हारा रक्त और तुम्हारे भाई हैं। हे वीर ! साहस का आश्रय लो। गर्व से बोलो कि मैं भारतवासी हूँ और प्रत्येक भारतवासी मेरा भाई है, बोलो कि अज्ञानी भारतवासी, दरिद्र भारतवासी, ब्राह्मण भारतवासी, चाण्डाल भारतवासी, सब मेरे भाई हैं; तुम भी कटिमात्र वस्त्रावृत होकर गर्व से पुकारकर कहो कि प्रत्येक भारतवासी मेरा भाई है, भारतवासी मेरे प्राण हैं, भारत की देव-देवियाँ मेरे ईश्वर हैं, भारत का समाज मेरी शिशु-सज्जा, मेरे यौवन का उपवन और मेरे वार्द्धक्य की वाराणसी

है। भाई, बोलो कि भारत की मिट्टी मेरा स्वर्ग है, भारत के कल्याण में मेरा कल्याण है और रात-दिन कहते रहो कि – 'हे गौरीनाथ ! हे जगदम्बे ! मुझे मनुष्यत्व दो ; माँ ! मेरी दुर्बलता और कापुरुषता दूर कर दो, मुझे मनुष्य बना दो !''[७]

तेरह अप्रैल १९२१ के 'यंग इण्डिया' में गाँधीजी ने अंग्रेजी शिक्षा का अन्धानुकरण अत्यंत घृणित बताया था। वे स्वयं भारतीय वेश-भूषा धारण करते थे। वे दक्षिण अफ्रीका में पगड़ी पहन कर गये। गोलमेज परिषद् में वे धोती पहन कर गये। गाँधीजी भी स्वामीजी की तरह हिन्दी एवं संस्कृत के समर्थक थे।

गाँधीजी ने कहा था – ''स्वामी विवेकानन्द संस्कृत भाषा के जिस महान सामर्थ्य की बात करते थे, मैं भी उसी में विश्वास करता हूँ।

महिला जागृति के उद्‌गाता

महिला उत्कर्ष और नारी-शिक्षा; दोनों को इन दोनों महानुभावों ने समान महत्त्व दिया। स्वामीजी ने १८९४ में अमरीका से अपने गुरुभाईयों को लिखे एक पत्र में लिखा – ''शक्ति के बिना जगत का उद्धार नहीं हो सकता। क्या कारण है कि संसार के सब देशों में हमारा देश ही सबसे अधम है, शक्तिहीन है, पिछड़ा हुआ है? इसका कारण यही है कि यहाँ शक्ति की अवमानना होती है। उस महाशक्ति को भारत में पुन: जाग्रत करने के लिए माँ का आविर्भाव हुआ है और उन्हें केन्द्र बनाकर फिर से जगत् में गार्गी और मैत्रेयी जैसी नारियों का जन्म होगा।''[८]

श्रीसारदा मठ, दक्षिणेश्वर

स्वामीजी चाहते थे कि सर्वप्रथम स्त्रियों के लिये मठ की व्यवस्था की जाये। उनकी यह आकांक्षा १९५४ में सारदा मठ की स्थापना से परिपूर्ण हुई।

ग्राम-सेवा के उद्‌बोधक

स्वामीजी ने कहा था, सच्चा राष्ट्र तो झोपड़ी में बसता है। किन्तु अफसोस ! किसी ने उसके लिये कुछ भी नहीं किया। स्वामीजी मानते थे कि भारत का पुनर्निर्माण ग्रामोद्धार से सम्भव होगा। आगे उन्होंने कहा था – ''हल चलाते किसानों, मछुआरों, चमारों और भंगियों की झोपड़ी में से नये भारत का निर्माण होने दो।''

ग्रामोद्धार के सन्दर्भ में व्यक्त स्वामीजी के विचार आज अत्यन्त प्रासंगिक हैं। देश के राजनीतिक नेताओं में से गाँधीजी ही ऐसे नेता थे, जिन्होंने भारत की उन्नति में ग्राम-सेवा के कार्य को सर्वोच्च महत्त्व दिया। कांग्रेस में ग्रामोन्मुखता इस प्रकार प्रविष्ट हुई।

गाँधीजी के १४ मुद्दों का रचनात्मक कार्यक्रम ग्रामाभिमुखी ही है। खादी और ग्रामोद्योग की उनकी संकल्पना भारत के लाखों ग्राम्यविस्तारों की पीठिका पर ही निरूपित व आधारित है।

स्वाधीनता संग्राम के नेता व जन्मदाता स्वामीजी मानते थे कि स्वाधीनता और स्वावलम्बन ही विकास की पूर्व शर्त है। १८९७ में अमेरिका से लौटकर कोलम्बो और अलमोड़ा तक के प्रवास में उन्होंने जो अग्निमय प्रवचन दिये, उन्हीं से प्रेरित होकर कई युवकों ने उन दिनों मातृभूमि के चरणों में अपना सर्वस्व निछावर कर दिया। गाँधीजी ने स्वाधीनता संग्राम का संचालन बहुत सफलता से किया। १४, फरवरी १८९७ को मद्रास में प्रवचन करते हुये स्वामीजी ने कहा था – ''आगामी पचास वर्ष के लिये यह जननी जन्मभूमि भारतमाता ही मानो आराध्य देवी बन जाये। तब तक के लिये हमारे मस्तिष्क से व्यर्थ के देवी-देवताओं के हट जाने में कुछ भी हानि नहीं है। अपना सारा ध्यान इसी एक ईश्वर पर लगाओ, हमारा देश ही हमारा जाग्रत देवता है।''[९]

यह एक अद्भुत सुयोग माना जा सकता है कि इसके बाद करीब पचास साल पश्चात् रोमाँ रोलाँ ने लिखा – ''स्वामी विवेकानन्द के देहान्त के बाद तीन साल के भीतर ही नई पीढ़ी ने बंगभंग का आन्दोलन देखा। यह तिलक और गाँधी के आन्दोलन का पूर्वरूप था। आज पूरा भारत संगठित होकर

सामूहिक कार्यक्रम में जुट गया है, उसके पीछे स्वामीजी का प्रबल वेग ही कारण है। श्रीमती विजयालक्ष्मी पंडित ने लिखा – ''गाँधीजी के नेतृत्व में जो स्वाधीनता संग्राम चला, उसकी भूमिका तैयार करने के पीछे सर्वाधिक योगदान स्वामी विवेकानन्द का रहा है।'' पंडित जवाहरलाल नेहरू ने कहा – ''राजनीतिज्ञ शब्द के रूढ़ अर्थ में स्वामीजी भले ही राजनीति के व्यक्ति न हों, किन्तु इतना तो अवश्य कहा जा सकता है कि वे भारत की अर्वाचीन राष्ट्रीय प्रवृत्ति के महान आद्यप्रणेताओं में से एक थे। वे राष्ट्र को आजाद करने की गतिविधियों को परिचालित करनेवाले अनेक नेताओं के प्रेरक और नायक थे।''

पूर्ण स्वराज की परिकल्पना

गाँधीजी की पूर्ण स्वराज की परिकल्पना स्वामीजी द्वारा आयोजित सामाजिक, राजकीय समस्याओं के अनुसंधान में देखें, तो स्वामीजी की विचारों के अनुसार ही था। कई लोगों ने स्वामीजी की स्वदेश वापसी पर उन्हें स्वराज पाने के लिये राजकार्य में सक्रिय होने का अनुरोध किया था। प्रत्युत्तर में स्वामीजी ने कहा – ''आपकी बात ठीक है। मान लो कि मैं पूरे भारत को स्वतन्त्रता दिलवा दूँ, पर आप इसकी रक्षा कर पायेंगे? पूरा देश छान मारो, क्या ऐसे निष्ठावान मिलेंगे?'' आज इस कथन का मूल्य हम समझ सकते हैं। राजनैतिक स्वतन्त्रता प्राप्त किये हमें पचहतर साल हो गये, हमारी समस्याएँ अभी भी ज्यों की त्यों बनी हुई हैं। उसका एक कारण है – चारित्रवान दृढ़संकल्प प्रतिभाओं का अभाव। स्वामीजी ने राजनैतिक स्वातंत्र्य से भी अधिक अपने आप को देश की प्रमुख समस्याओं पर अधिक केन्द्रित किया था। वे बातें हैं – जनजागृति, नारी–उत्थान, शिक्षा व रचनात्मक कार्यक्रम। ताकि देश स्वाधीनता से पूरा लाभ उठाने के योग्य बने। गाँधीजी ने भी पूर्ण स्वराज की परिकल्पना में समाज के सर्वांगीण विकास को शामिल करते हुये अनेक रचनात्मक कार्यक्रमों को रूपायित किया था। इनसे केवल राजनैतिक स्वातंत्र्य के लिए उद्यत कांग्रेस को एक नई दिशा मिली थी।

सत्य के दो महान पुजारी

गाँधीजी ने अपना समग्र जीवन सत्य के साक्षात्कार के लिये समर्पित किया। यहाँ तक कि उन्होंने अपनी जीवनी की पुस्तक का भी 'सत्य के प्रयोग' नाम दिया। इस ग्रन्थ की प्रस्तावना में उन्होंने लिखा है – 'मैं पुजारी तो सत्यदेव का ही हूँ, वही एक मात्र सत्य है, बाकी सब मिथ्या है। वह सत्य मुझे मिला नहीं, मैं उसका अन्वेषक हूँ।' स्वामीजी ने भी अपना जीवन सत्यरूपी परम तत्त्व के साक्षात्कार के लिये तथा उसी के प्रसारार्थ अर्पित किया। जब वे कॉलेज के विद्यार्थी थे, तब एक बार तो वे इतने व्याकुल हो उठे थे कि सभी महात्माओं से पूछते रहते – ''हे महाशय ! क्या आपने ईश्वर-दर्शन किया है?'' पर सभी को वे अनुत्तर पाते। अन्त में उन्हें श्रीरामकृष्ण परमहंस जैसे गुरु मिले। उन्होंने उत्तर दिया कि वे परमात्मा का दर्शन कर चुके हैं और विवेकानन्द को भी करवा सकते हैं। उन्होंने कहा – ''जैसे मैं तुम्हें देख सकता हूँ, उससे भी अधिक प्रत्यक्ष रूप से मैं उसका दर्शन करता हूँ।'' गुरु के आदेशानुसार चलकर २२ साल की आयु में ही विवेकानन्द ने परम सत्य का साक्षात्कार किया। उन्होंने निर्विकल्प समाधि की अनुभूति की। वे उसमें ही निमग्न रहना चाहते थे, किन्तु श्रीरामकृष्ण देव ने उन्हें जगत-कल्याण के लिये वैसा करने से रोक दिया। उन्होंने विवेकानन्द से कहा, माँ ने सब कुछ तुम्हें दिखा दिया। जैसे किसी खजाने को ताला लगाकर सँभालकर रखा जाता है, वैसे ही तुम्हारी इस अनुभूति को ताला लगाकर सम्भालकर रखा जायेगा और उसकी चाबी मेरे पास रहेगी। जब तू अपने समाज-कल्याण के कार्य को पूरा करेगा, तब वह ताला खोल दिया जायेगा। अभी पहले तुम्हें जगन्माता का कार्य पूरा करना होगा।'' स्वामीजी ने समस्त जीवन सत्य के प्रचारार्थ समर्पित किया और उनचालीस वर्ष की आयु में ध्यानावस्था में ही देहत्याग किया।

अहिंसा के प्रयोग

पूरे देश को बिना शस्त्र प्रयोग किये ब्रिटिश शासन की जंजीरों से मुक्त कर स्वाधीनता दिलाने का चमत्कार गाँधीजी ने किया था। विश्व-इतिहास में यह एक अभूतपूर्व घटना है। स्वामीजी ने अहिंसा के उच्चतम आदर्श को समझाते हुये यह कहा था – ''प्रतिकार-शक्ति होने पर भी हम उसका उपयोग न करें, प्रतिकार न करें, उस शक्ति-प्रयोग पर संयम बरते, तो हम प्रेम का कोई भव्य कार्य चरितार्थ कर रहे हैं। किन्तु हममें वह शक्ति ही न हो फिर भी हम प्रेम-भावना से प्रेरित होकर मानो आत्मवंचना कर रहे हैं तो उससे प्रेम का कोई भव्य आदर्श स्थापित नहीं हो पाता।''

गाँधीजी ने भी यंग इण्डिया में लिखा था – ''अहिंसा और कायरता; ये दोनों विरोधी शब्द हैं। अहिंसा सबसे बड़ा सद्‌गुण है और हिंसा सबसे बड़ा दुर्गुण।'' अहिंसा का उद्‌गम

प्रेम से हुआ है और हिंसा का कायरता से, जो अन्य की पीड़ा का कारण बनती है।'' स्वामीजी ने भी यही कहा था कि प्रतिकार की भावना दुर्बलता से जन्म लेती है। अहिंसा और प्रेम के इसी आदर्श का पूरे देश में सत्याग्रह आन्दोलनों के रूप में कार्यान्वित करने का श्रेय गाँधीजी को मिला।

श्रीरामकृष्ण देव के दो महान भक्त

स्वामीजी को अपने गुरु श्रीरामकृष्ण के प्रति कितना उत्कट भक्ति भाव था, यह तो सर्वविदित है। किन्तु गाँधीजी को भी श्रीरामकृष्ण के प्रति अपार श्रद्धा और प्रबल भक्तिभावना थी, यह बात कोई नहीं जानता। गाँधीजी रामकृष्ण को ईश्वर का अवताररूप मानते थे। उनके महान चरित्र से गाँधीजी ने सर्वधर्म-समन्वय, त्याग, ब्रह्मचर्य, सत्याचरण, अहिंसा आदि की शिक्षा ग्रहण की थी। ..कन्सन्ट शा ने गाँधीजी के जीवन चरित्र ''... kindly light'' में लिखा है – श्रीरामकृष्ण के प्रति गांधीजी का उत्कट प्रबल भक्तिभाव था। इस धरती पर श्रीरामकृष्ण से अधिक अलौकिक अभिव्यक्ति अन्य किसी में नहीं पाई गई। फ्रेन्च मनीषी रोमाँ रोलाँ ने ४ अक्तूबर, १९२६ के दिन अपनी दैनन्दिनी में लिखा – ''श्री धनगोपाल मुखर्जी के साथ संवाद से जाना गया है कि गाँधीजी श्रीरामकृष्ण के आध्यात्मिक सम्मोहन में आ गये हैं। वे उनके जीवन चरित्र से अधिक दिव्यतर अन्य किसी बात को नहीं स्वीकार करते।''

रोमाँ रोलाँ द्वारा लिखित श्रीरामकृष्ण एवं विवेकानन्द विषयक ग्रंथों को पढ़कर गाँधीजी अत्यधिक प्रभावित हुये थे। मादलेन रोलाँ के ६-१-१९३३ के पत्र में गाँधीजी ने लिखा था – ''कृपा करके ऋषि (रोमाँ रोलाँ से) से कहना कि उनके रामकृष्ण एवं विवेकानन्द पर लिखे ग्रंथों को कुछ ही दिन पहले पढ़ा। जीवन में इससे मुझे पहली बार ही अत्यन्त आनन्द का अनुभव हुआ और हिन्दुस्तान के प्रति उनके प्रेम को मैंने और भी अधिक पूर्णता से प्राप्त किया।''

१९२४ में अद्वैत आश्रम कलकत्ता द्वारा प्रकाशित श्रीरामकृष्ण की अंग्रेजी में लिखी गई जीवनी की प्रस्तावना में गाँधीजी ने लिखा – ''श्रीरामकृष्ण परमहंस की जीवन गाथा एक स्व-आचरित धर्म की कथा है। उनका जीवन हमें ईश्वर के प्रत्यक्ष दर्शन के लिये सक्षम बनाता है। उनकी जीवनी के पाठकों को यह बात अवश्य प्रतीत होगी कि केवल एक ईश्वर ही सत्य है, बाकी सब मिथ्या है। श्रीरामकृष्ण भक्तिभाव की जीवन्त प्रतिमा थे। उनके वचन केवल विद्वत्तापूर्ण दिमागी व्यायाम नहीं हैं। किन्तु स्वयं जीवन उसमें मुखरित हुआ है। उसमें उनके स्वानुभवों का निदर्शन है। यही कारण है कि पाठक उससे अत्यन्त प्रभावित होते हैं। अनास्था के इस युग में रामकृष्ण एक ज्वलन्त श्रद्धा और जीवन्त विश्वास की प्रतिमूर्ति बने हुये हैं। उनका जीवन एक उदाहरण के रूप में हजारों लोगों की आस्था व आश्वासन का रूप है। यदि हमें ऐसा आश्वासन न मिलता, तो हम जीवन भर एक उच्चतम आध्यात्मिक प्रकाश से वंचित रह जाते। रामकृष्ण का जीवन अहिंसा का संदेश है। उनका प्रेम भौतिकता से या अन्य किसी भी सीमाओं से परे है।''

रामकृष्ण मिशन और गाँधीजी

स्वामी विवेकानन्द द्वारा स्थापित रामकृष्ण मठ एवं रामकृष्ण मिशन उनके विचारानुसार राजनीति से अलिप्त रहे हैं। यही कारण है कि गाँधीजी के असहयोग आन्दोलन में इस संस्था ने सक्रिय भाग तो नहीं लिया, किन्तु स्वामीजी के विचारों से मिलते-जुलते गाँधीजी के रचनात्मक कार्यक्रमों को अपनाया था। गाँधीजी के रचनात्मक मिशन की कई गणमान्य सन्तों ने प्रशंसा भी की है। रामकृष्ण मिशन व मठ के द्वितीय परमाध्यक्ष स्वामी शिवानन्दजी महाराज ने सन् १९२२ में एक स्थान पर लिखा है – ''महात्मा गाँधी वास्तव में अनेक प्रकार की शक्तियों से विभूषित हैं। स्वामी विवेकानन्द ने अपने प्रवचनों में भारत का हित किस बात में है, इसका उल्लेख किया है। मूलत: भारत के पुनरुद्धार की दृष्टि से उन्होंने आज से २५-३० वर्ष पहले जो समाधान निर्दिष्ट किये थे, वे थे – अस्पृश्यता निवारण, दलित समाज की उन्नति, आम जनता की शिक्षा आदि। उन सभी दिशाओं का प्रचार आज गाँधीजी के द्वारा हो रहा है।''

गाँधीजी भी रामकृष्ण मठ और मिशन के प्रति गहरी श्रद्धा रखते थे। १४ मार्च, १९२६ को रंगून केन्द्र में (जो कि वर्तमान में बन्द है) भाषण देते हुये उन्होंने कहा था – ''रामकृष्ण मिशन ने मुझे जो सम्मान-पत्र दिया है, उसके लिये मैं कृतज्ञ हूँ। अब मैं रामकृष्ण मिशन और श्रद्धेय श्रीरामकृष्ण परमहंस के लिये कुछ कहना चाहता हूँ। वे हमारे लिये एक महान कार्यक्षेत्र छोड़कर गये हैं। मुझे उनके कार्य में श्रद्धा है। आप सब उनके दिखाये मार्ग का अनुसरण करें, यही मैं चाहता हूँ। मैं जहाँ कहीं भी जाता

हूँ, रामकृष्ण मिशन के अनुयायी मुझे निमन्त्रित करते हैं, मुझे यह प्रतीत होता है कि मेरे कार्य में उनका आशीर्वाद है। रामकृष्ण सेवाश्रम और उनके मिशनरी अस्पताल भारत में सर्वत्र फैले हुये हैं। पूरे देश में चारों ओर उनके जनसेवा के छोटे-बड़े कार्य विस्तारित हुये हैं। अनेक अस्पताल कार्यरत हैं, जहाँ दीन-दुखियों को नि:शुल्क स्वास्थ्य सेवायें उपलब्ध हैं। समय-मर्यादा के कारण जितना चाहता हूँ, उतना कह नहीं पाऊँगा। रामकृष्ण परमहंस की स्मृति के साथ ही विवेकानन्द का नाम संलग्न है। विवेकानन्द की प्रेरणा से सेवाश्रम चारों ओर विकसित हुये हैं। अपने गुरु को पूरे विश्व में प्रतिष्ठित करनेवाले भी वे ही थे। ऐसे सेवाश्रम निरन्तर विस्तृत हों, यही मेरी प्रभु-प्रार्थना है। जो हृदय से निर्मल हैं और जिन्हें भारत के प्रति सच्चा प्रेम है, वे लोग ऐसे कार्यों में जी-जान से अग्रसर हों, यही मेरी शुभाशंसा है।''

कोलम्बो की विवेकानन्द सोसायटी में भी गाँधीजी गये थे। १३ नवम्बर, १९२९ को दिये गये भाषण में भावावेश के साथ वे कहते हैं – स्वामी विवेकानन्द का नाम लेते ही मानों कोई जादुई प्रभाव हमें अभिभूत कर लेता है। वे हिन्दुस्तान के जन-जीवन पर गहन और कभी न मिटनेवाला ऐसा प्रभाव छोड़ गये हैं कि भारत में जगह-जगह पर उनके नाम पर अनेक संस्थाएँ सेवारत हैं। रामकृष्ण मिशन की भी अनेक शाखाएँ उसी प्रकार अपना ठीक योगदान कर रही है।'' गाँधीजी ने रामकृष्ण मिशन के कोयम्बटूर केन्द्र में लाइब्रेरी के मकान का भूमिपूजन किया था। रामकृष्ण मिशन के वृन्दावन केन्द्र में गाँधीजी ने परिदर्शन किया था।

रामकृष्ण मठ एवं मिशन का मुख्य कार्यालय

रामकृष्ण मठ और रामकृष्ण मिशन का मुख्य कार्यालय बेलूड़ मठ में गाँधीजी दो बार गये थे। सन् १९०१ में वे स्वामी विवेकानन्द जी से मिलने गये थे, किन्तु स्वामीजी उस समय मठ में नहीं थे। एक जुलाई, १९३२ को लिखे पत्र में गाँधीजी ने लिखा था – ''स्वामी विवेकानन्द एक महान सेवक थे। जिसे उन्होंने अपने जीवन का परम सत्य माना उसके लिये उन्होंने सब कुछ समर्पित कर दिया। सन् १९०१ में जब मैं बेलूड़ मठ देखने गया, तो मन में स्वामीजी के दर्शन की उत्कट अभिलाषा भी थी। मठ के अन्य स्वामी ने मुझे कहा कि वे बीमार हैं और शहर में हैं, उनसे मिलना मना है। तब मैं अत्यन्त निराश हुआ था।'' स्वामी विवेकानन्द के जन्मतिथि ६ फरवरी, १९२१ में गाँधीजी फिर एक बार पंडित मोतीलाल नेहरू, मोहम्मद अली आदि के साथ बेलूड़ मठ गये थे। उन्होंने सभी गतिविधियों का बड़े मनोयोग और सूक्ष्मता से अवलोकन किया और उपस्थित जनसमुदाय से कहा कि वे इस दिन स्वामीजी के प्रति अपनी श्रद्धा अर्पित करने आये हैं, असहयोग आन्दोलन या चरखे का प्रचार करने नहीं। उन्हीं के शब्दों में यह बात सुनें – ''मुझे स्वामी विवेकानन्द के प्रति अत्यन्त सम्मान है। मैंने उनकी अनेक पुस्तकों का अध्ययन किया है। मुझे प्रतीत हुआ कि इस महापुरुष के कई आदर्शों से मेरी विचारधारा का मेल है। स्वामीजी यदि जीवित होते, तो राष्ट्रीय जागृति में हमारे सब प्रकार से सहायक होते।''

उपसंहार – हमने कई प्रकार से देखा कि स्वामी विवेकानन्द और गाँधीजी के विचारों में अद्भुत साम्य था। प्रत्यक्ष व परोक्ष रूप से स्वामीजी के विचारों एवं आदर्शों का गाँधीजी पर अनन्त प्रभाव था। प्यारेलाल और विन्सेन्ट शाल ने गाँधीजी की जीवन-कथा में इस प्रभाव का उल्लेख किया है। रोमाँ रोलाँ, काका कालेलकर, आचार्य विनोबा भावे, पंडित जवाहरलाल नेहरू, श्रीमती विजया लक्ष्मी पंडित, आचार्य कृपलानीजी, कुमारप्पा आदि ने भी अपने-अपने लेखों में गाँधीजी के मानस पर पड़े स्वामी विवेकानन्द और रामकृष्ण परमहंस के प्रभाव का उल्लेख किया है। गाँधीजी ने स्वयं भी उन पर पड़े इस प्रभाव का उल्लेख किया है।

स्वामी विवेकानन्द जी के राजनैतिक और सामाजिक विचारों को जीवन-व्यवहार में क्रियान्वित करने का भगीरथ पुरुषार्थ महात्मा गाँधीजी ने किया है। ऐसा लगता है,

शेष भाग पृष्ठ ५०४ पर

सारगाछी की स्मृतियाँ (१२१)

स्वामी सुहितानन्द

(स्वामी सुहितानन्द जी महाराज रामकृष्ण मठ-मिशन के उपाध्यक्ष हैं। महाराजजी जगजननी श्रीमाँ सारदा देवी के शिष्य स्वामी प्रेमेशानन्द जी महाराज के अनन्य निष्ठावान सेवक थे। उन्होंने समय-समय पर महाराजजी के साथ हुए वार्तालापों के कुछ अंश अपनी डायरी में गोपनीय ढंग से लिखकर रखा था, जो साधकों के लिये अत्यन्त उपयोगी है। 'उद्बोधन' बँगला मासिक पत्रिका में यह मई-२०१२ से अनवरत प्रकाशित हो रहा है। पूज्य उपाध्यक्ष महाराज की अनुमति से इसका अनुवाद रामकृष्ण मिशन विवेकानन्द आश्रम, रायपुर के स्वामी प्रपत्त्यानन्द और वाराणसी के रामकुमार गौड़ ने किया है, जिसे 'विवेक-ज्योति' में क्रमश: प्रकाशित किया जा रहा है। – सं.)

पाठकों ने यह देखा है कि इस समय महाराज श्रीकृष्ण को लेकर मतवाले थे। उनके निर्देश पर सेवक ने दिनांक ८-९-६४ को श्रीकृष्ण विषयक एक पुस्तक की सूची रमानन्द महाराज को भेजी। यह सूची निम्नवत् है –

श्रीरामकृष्ण

श्रीचरणेषु

ब्रह्मचारी जी, नमस्ते। कैसे हैं? अच्छे हैं न?

१८-८ तारीख के बाद आज २८-८ तारीख है।

थोड़ी 'विषय' की बात हो। स्वामीजी की दो पुस्तकों और शिक्षा की दो पुस्तकों के सम्बन्ध में कितनी प्रगति हुई है? आत्मविकास की दो पुस्तकों और ठाकुर के शिष्यों की जन्म-मृत्यु तालिका का क्या हुआ? हमलोग इस समय श्रीकृष्ण के सम्बन्ध में स्वाध्याय कर रहे हैं। सुनील महाराज का नमस्कार, प्रीति-शुभेच्छा। पवित्र दा का और मेरा प्रणाम।

इति

सनातन

श्री ब्र. विष्णुचैतन्य

आर.के.एम. विद्यापीठ

पो. - विवेकानन्द नगर

जिला – पुरुलिया, पश्चिम बंगाल।

श्रीकृष्ण के सम्बन्ध में कुछ पुस्तकों की सूचना दे रहा हूँ –

१. बंकिमबाबू का कृष्ण चरित्र।

२. नवीन सेन का श्रीकृष्ण के सम्बन्ध में काव्य – कुरुक्षेत्र, प्रभास आदि।

३. बिहारी लाल सरकार का – श्रीकृष्ण।

४. अपरेश मुखोपाध्याय का – श्रीकृष्ण (नाटक)।

इन पुस्तकों का हम लोगों ने प्रचुर उपयोग किया है। नारी पात्रों को छोड़कर आप लोग भी इसका अभिनय कर सकते हैं। (गुरुदास चट्टोपाध्याय एण्ड सन्स)।

५. श्रीकृष्ण का जीवन और धर्म – कोलकाता नवविधान मंडली के उपाध्याय द्वारा निबद्ध – इसकी रासलीला और अन्तिम भाग का धर्ममत और समन्वयवाद का बहुत ही चित्ताकर्षक विवेचन है।

दिनांक २९-८-६४ के बाद हम देखते हैं कि डायरी में दिनांक २९-९-६४ को लिखा गया है। महाराज की चिकित्सा अथवा सहयोगी के अभाव में सेवक को निश्चित रूप से व्यस्त रहना पड़ा होगा। किन्तु महाराज का सजग मन अन्य साधुओं के कल्याण में कैसे लगा रहता था, इसका निदर्शन दिनांक ११-०९-६४ और १८-०९-६४ को रमानन्द महाराज को लिखित पत्र में प्राप्त होता है –

श्रीरामकृष्ण:

वाराणसी

११-९-६४

प्रिय विष्णु,

श्रीमान पवित्र के हाथों तुम्हारे लिए दो चीजें दी थीं। उसे तुम किसी तरह ले लेना।

(१) उपनिषदों की एक छोटी पुस्तक – उसमें पाँच उपनिषदों का अनुवाद और अन्वय है। तुम उसे अच्छी तरह से पढ़ना। आवश्यक होने पर स्थान-स्थान पर किसी विद्वान

से सहायता लेना। (२) ठाकुर और माँ के दो चित्र, हमेशा सम्मुख रखने के लिए।

आत्मविकास की जिन दो प्रतियों को संशोधन करके तुम्हारे पास भेजा हूँ, उन्हें तुम यथाशीघ्र डाक से मेरे पास भेज दो। क्योंकि तारापद के पास एक बार छापने के लिए मैं उन्हें देखकर भेजूँगा। मेरा शरीर बहुत खराब है।

इति

शुभाकांक्षी

प्रेमेशानन्द

श्रीरामकृष्ण:

वाराणसी

१८-९-६४

प्रिय विष्णु,

पुस्तिका और तुम्हारा पत्र पाकर प्रसन्नता हुई। जितने दिन तुम्हारा सम्यक् चिन्तन रहेगा, उतने दिनों तक सम्यक् क्रिया-कलाप चलेगा। क्रिया-कलाप सम्यक् रहने पर चिन्तन सम्यक् है, इसे समझना होगा। मुझे आशा है कि तुम कभी पीछे नहीं हटोगे। सम्प्रति स्वामीजी की 'माई मास्टर' (मेरे गुरुदेव) नामक व्याख्यान सुना। यह मुझे इतना अच्छा लगा है कि इच्छा हो रही है कि इसे पढ़ने हेतु सभी से अनुरोध करूँ। यह एक अतीव शोधपरक लेख है। वैदिक सभ्यता, भारतीय संस्कृति और मानव जीवन रहस्य, इन तीनों विषयों के मौलिक सूत्र इसमें अद्‌भुत ढंग से प्रकटित हुए हैं। किन्तु यह निश्चित बात है कि विशेष मनोयोग के साथ बारम्बार नहीं पढ़ने से इसका मर्म समझना कठिन है। इसमें विशेष ध्यान देने की बात यह है कि ठाकुर को साहबों के सम्मुख रखने के लिए उनकी जीवन की घटनाओं में कुछ उलट-फेर किया गया है। इसे कई बार पढ़कर, तुम्हें कैसा लगा, इसे बताने से मुझे प्रसन्नता होगी। मुझे लगता है कि स्कूलों की उच्च श्रेणी के छात्रों को इसे पढ़ाने से अच्छा रहेगा।

मेरा शरीर बहुत अस्वस्थ है। खुजली असहनीय रूप से बढ़ गयी है। मेरा स्नेह और शुभेच्छा जानना।

इति

शुभाकांक्षी प्रेमेशानन्द

२९-९-१९६४

दोपहर में स्नान करके आने पर महाराज के मुख में मैंने गंगाजल और महाप्रसाद दिया।

महाराज – संसार में ऐसी कोई वस्तु नहीं है, जो मुझे अपवित्र कर सके। पवित्र वस्तु मेरे आँचल में बँधी है। गंगा में तो कितनी ही मिट्टी और गंदगी रहती है, किन्तु रामकृष्ण-नाम में कोई गंदगी नहीं है। यह एकमात्र वस्तु है, जो सर्वदा निर्विशेष निर्गुण होकर रह सकती है।

२९-९-१९६४

दोपहर में गीता के सत्रहवें अध्याय के पाठ के समय –

महाराज – महिलाओं से उचित दूरी नहीं रखने पर बड़ा ही संकट है। वे घूँघट में दीन-हीन भाव से आकर मधुर स्वर में ऐसी-ऐसी बातें कहेंगी, जिससे मन में उनके प्रति थोड़ा स्नेह-ममता का संचार हो जाता है। इससे ही पतन होता है। उनका तो इसी प्रकार का स्वभाव ही है कि स्नेह-प्रेम के बंधन में बाँधकर रखना।

कल रात साढ़े ग्यारह बजे नन्द बाबू निकटवर्ती घर में दिवंगत हो गए।

महाराज – दस वर्षों के बाद नन्द बाबू को पहचानने वाले अनेक लोगों की मृत्यु हो जाएगी। एक सौ वर्षों बाद नन्द बाबू की कोई स्मृति ही नहीं रहेगी।

२६-१२-१९६४

आज लालबहादुर शास्त्री ने सेवाश्रम का परिदर्शन किया।

सेवक – साधु के लिए तो राज-दर्शन निषिद्ध है।

महाराज – स्वामीजी तो राजाओं के साथ घूमते थे।

प्रश्न – वह तो विशेष उद्देश्य से था, लोक कल्याण हेतु था। इसके अतिरिक्त वे निर्विकल्प समाधिवान पुरुष थे और जगत् का हित करना ही उनका उद्देश्य था। इसके लिए वे ईश्वर से आदेशप्राप्त थे।

महाराज – इसीलिए तो, जिसने तुमसे यह पूछा कि लालबहादुर को देखा कि नहीं, उनसे कहो कि ठाकुर के जितने सब लाल थे, वे सब लालबहादुर थे। उनमें से किसी को भी तो देख नहीं पाया। इसीलिए अभी माँ और महाराज के जितने सब बहादुर हैं, उन्हें देखकर ही नेत्रों की लालसा पूरी कर रहा हूँ। दूसरे लालबहादुर की हमें आवश्यकता नहीं है।

प्रश्न – जब आप महन्त थे, तब आश्रम में किसी वी. आई.पी. के आने पर आप किस प्रकार स्वागत करते थे?

उत्तर – वे आए, अपना काम और दर्शन करके चले गए। **(क्रमशः)**

श्रीरामकृष्ण-गीता (१७)

स्वामी पूर्णानन्द, बेलूड़ मठ

(स्वामी पूर्णानन्द जी रामकृष्ण संघ के वरिष्ठ संन्यासी हैं। उन्होंने २९ वर्ष पूर्व में इस पावन श्रीरामकृष्ण-गीता ग्रन्थ का शुभारम्भ किया था। इसे सुनकर रामकृष्ण संघ के पूज्य वरिष्ठ संन्यासियों ने इसकी प्रशंसा की है। विवेक-ज्योति के पाठकों के लिए बंगला भाषा से इसका हिन्दी अनुवाद रामकृष्ण मिशन आश्रम, नारायणपुर के स्वामी कृष्णामृतानन्द जी ने की है। – सं.)

जीवावस्थाभेदः

श्रीरामकृष्ण उवाच

मनुष्यास्तु जगत्यस्मिन्नुपधानपिधानवत्।
शोणस्तेषां बहिः कश्चित् कश्चित् कृष्णोऽपि वा भवेत्।।१।।

– श्रीरामकृष्ण बोले – मनुष्य इस जगत में मानो तकिये का आवरण जैसा है। इसका बाहरी आवरण कभी लाल या कभी काला भी होता है।।१।।

अभ्यन्तरे तु सर्वेषां तूलमेकं हि विद्यते।
कश्चित् सुश्रीर्मनुष्याणां कश्चित् कृष्णोऽपि बाह्यतः।।२।
कश्चित् साधुरसाधुर्वा दृश्यन्ते विविधास्तथा।।
ईश्वरः सर्वभूतानामन्तस्त्वेको विराजते।।३।।

– परन्तु सभी के भीतर एक ही रुई विद्यमान है। उसी प्रकार मनुष्यों में भी बाहर से कोई सुन्दर और कोई काला, कोई साधु अथवा असाधु भिन्न-भिन्न प्रकार के दिखाई देते हैं, परन्तु समस्त जीवों के भीतर वही एक ईश्वर विराज रहे हैं।।२-३।।

कविता

माँ काली का ध्यान करो

डॉ. ओमप्रकाश वर्मा

माँ काली का ध्यान करो मन, गाओ सदा उन्हीं का गान।
नहीं मृत्यु से डरो कभी भी, तुम काली संतान महान।।
माँ काली आनन्ददायिनी, कुलकान्ता है उनका नाम।
भले भयानक वे दिखतीं हैं, अंतर उनका मातृ समान।।
माँ काली दुख पाश काटतीं, भक्त साधकों की हैं प्राण।
मरने का भय दूर भगातीं, देतीं आत्मशक्ति का ज्ञान।।
माँ काली हैं नित्य वंदिता, रत हैं सदा जगत कल्याण।
माँ काली ही शक्तिस्वरूपिणि, हरती दुष्टों का अभिमान।।
माँ काली हैं मुक्तकेशिनी, वे हैं अमित गुणों की खान।
विमल हृदय से जो भजता है, देतीं उसे कृपा का दान।।

मनुष्याः द्विविधा दृष्टाः संसारेऽत्र स्वभावतः।।
केचित् शूर्पस्वभावाश्च केचिद्वा चालनी यथा।।४।।

– इस संसार में स्वभाव से दो प्रकार के लोग देखने में आते है। उनमें से कुछ सूप-स्वभाव के और कुछ छलनी की तरह होते हैं।।४।।

शूर्पो यथा परित्यज्य ततोऽसारांस्तुषानपि।
शस्यसंगृह्य सारं यत् स्वाभ्यन्तरे हि रक्षति।।५।।
कामिनीकाञ्चनादीनि केचिदत्र जनास्तथा।।
फल्गून्यपास्य संसारे गृहणन्ति सारमीश्वरम्।।६।।

– जिस प्रकार सूप सभी असार वस्तु भूषी इत्यादि का परित्याग करके उनमें से सार वस्तु (शस्य) को संग्रह करके अपने ही भीतर रखता है, उसी प्रकार इस संसार में कुछ लोग कामिनी-काञ्चनादि असार वस्तु का परित्याग करके सार वस्तु भगवान को ग्रहण करते हैं।।५-६।। **(क्रमशः)**

कविता

ईश्वर ही हैं जीवन के धन

मोहन सिंह मनराल

ईश्वर ही हैं जीवन के धन, रामकृष्ण समझाने आए।
भर लो झोली जो भी चाहो, रामकृष्ण लुटाने आए।।
ईश्वर ही हैं जीवन के धन ....।।१।।
माँ माँ कहते सब दुःख सहते, माँ का दर्शन पाने आए।
ईश्वर प्रेम में हो मतवाले, अद्भुत नृत्य दिखाने आए।।२।।
गृही जनों को जा निर्जन में, मन से त्याग कराने आए।
दासी जैसे रहो जीवन में, सब आसक्ति मिटाने आए।।३।।
ईश्वर बिना है जीना सूना, जीवन सरस बनाने आए।
घृणा नहीं, नहीं कट्टरता, स्नेह का पाठ पढ़ाने आए।।४।।
मन ही है बंधन का कारण बंधन मुक्त कराने आए।
जग में मातृत्व की प्रेमवारि से, मन का संताप मिटाने आए।।५।।
जग में सनातन धर्म-ध्वजा ऊँचाई तक फहराने आए।
धर्म सभा के विश्वमंच से इसका उद्घोष कराने आए।।६।।

मुश्किल घड़ी में हिम्मत न हारो

श्रीमती मिताली सिंह, बिलासपुर

प्रत्येक मनुष्य के जीवन में मुश्किलें आती हैं, पर हमें उन मुश्किल घड़ियों में धैर्य के साथ कार्य करना चाहिए। आओ बच्चों हम यहाँ पर ऐसे ही एक साहसी साइकिल गर्ल ज्योति कुमारी के बारे में जानते हैं।

ज्योति कुमारी का जन्म सिरहुल्ली गाँव, सिंहवाड़ा प्रखण्ड, दरभंगा, बिहार में हुआ था। ज्योति कुमारी के पिता मोहन पासवान तथा माता का नाम फूलो देवी है। मोहन पासवान गुरुग्राम में रिक्शा चलाकर अपने परिवार का पालन-पोषण करते थे। एक दुर्घटना में मोहन पासवान को चोट लग गयी थी।

ज्योति अपनी माँ तथा जीजाजी के साथ बिहार से अपने पिता की सेवा करने गयी थी। इसी बीच लॉकडॉउन लग गया। वे गुरुग्राम से बिहार अपने गाँव वापस आना चाहते थे। लेकिन लॉकडॉउन के कारण यातायात के सभी साधन बन्द थे, जिससे वे अपने गाँव वापस नहीं आ पा रहे थे। उनकी पुत्री ज्योति ने अदम्य साहस, अपने ऊपर अपरिमित श्रद्धा-विश्वास तथा दृढ़ निश्चय से अपने पिता को गुरुग्राम, हरियाणा से १२०० कि.मी. दूर अपने गाँव सिरहुल्ली, बिहार साइकिल से लाने का निर्णय लिया।

बच्चो ! इस निर्णय का पालन करना उतना सरल नहीं था, जितना हम समझते हैं। गुरुग्राम से दरभंगा तक के सफर में ज्योति को कई परेशानियों का सामना करना पड़ा। तेज गर्मी का समय, खाने को कुछ भी नहीं और पास में केवल ५००/- रुपये उसके पास थे। उसकी साइकिल भी पुरानी थी। उसके पिता ने भी कहा कि बेटी यह बहुत कठिनाई का कार्य है, तुम्हें बहुत कठिनाइयों का सामना करना पड़ सकता है, तो ज्योति ने पिताजी से कहा कि आप चिन्ता मत कीजिए मैं आपको साइकिल से ले चलूँगी।

ज्योति ने अपने बीमार पिता के साथ अपनी पुरानी साइकिल पर हरियाणा से बिहार, दरभंगा तक

१२०० कि.मी. की लम्बी दूरी की यात्रा मात्र ७ दिन में तय कर अपने अदम्य साहस का परिचय दिया। यह तभी सम्भव हुआ जब उसे अपने आप पर विश्वास था। जैसा की स्वामीजी ने कहा है, ''जब तब तुम स्वयं पर विश्वास नहीं करते, तब तक तुम ईश्वर पर विश्वास नहीं कर सकते।''

इस साहसिक कार्य के कारण आज ज्योति कुमारी और उसके परिवार को भारतवर्ष तथा देश से बाहर भी पहचान मिल गई है। यहाँ तक कि साइकिल फेडरेशन ऑफ इण्डिया ने उसे दिल्ली बुलाकर नौकरी देने और उसके आगे के सभी व्यय उठाने को तैयार है।

ज्योति ने अपने प्रेरणादायी जीवन से न केवल भारत बल्कि भारत के बाहर के लोगों को भी प्रभावित किया। ईवांका ट्रम्प (भूतपूर्व अमेरिकी राष्ट्रपति डोनाल्ड ट्रम्प की पुत्री) ने भी ज्योति के विषय में कहा, ''१५ वर्षीय ज्योति कुमारी ने अपने बीमार पिता को लेकर १२०० कि.मी. की दूरी ७ दिनों में तय करके अपने गाँव पहुँची। यह भारतीयों की सहनशीलता और उनके अगाध प्रेम का परिचायक है।''

ज्योति कुमारी को प्रधानमन्त्री राष्ट्रीय बाल पुरस्कार-२०२१ से सम्मानित किया गया है। इसमें उसको १ लाख रुपया तथा एक सम्मान-पत्र दिया गया।

बच्चो ! इस कहानी से हमें सीख मिलती है कि कठिन समय में हमें धैर्य और साहस से कार्य करना चाहिए, जैसा कि यहाँ ज्योति ने किया। ○○○

डुबकी लगाओ

भिक्षु विशुद्धपुत्र

अनुवाद – अवधेश प्रधान

पूर्व प्राध्यापक बी.एच.यू., वाराणसी

(गतांक से आगे)

अष्टपाश

आज शाम को वार्तालाप के क्रम में पूजनीय महाराजजी ने कहा, ''विद्या ददाति विनयम्। ठाकुर कहते थे न कि ऊँची जगह पर पानी नहीं टिकता। इसीलिए तो उन्होंने चावल केला बाँधने वाली विद्या नहीं चाही; चाही परा विद्या। ग्रंथ यानी ग्रंथि; पाश यानी फांस। अष्टपाश तो रहते ही हैं, इसके ऊपर एक बन्धन और बढ़ गया।'' यह कहकर उन्होंने प्रश्न किया, ''अष्टपाश क्या है?'' मैं नहीं बता पाया, तो बोले, ''तब फिर क्या व्याख्यान देता है?'' फिर स्वयं बताने लगे, ''लज्जा, घृणा, भय, जाति, कुल, मान, शील और जुगुप्सा। देखते नहीं, ठाकुर उसके लिए जनेऊ फेंककर जप-ध्यान करते थे। तुमलोग लड़के हो, पढ़ाई-लिखाई करना, लेकिन दृष्टि रखना ठाकुर की ओर। खूब जप-ध्यान करना। कभी अहंकार, अभिमान मत करना। ऊँची जगह पर पानी नहीं टिक सकता; सब नीचे ढलक जाता है।''

स्वामी विशुद्धानन्द जी महाराज

फिर चैतन्यदेव को देखो। इतना बड़ा पंडित उस समय नवद्वीप में नहीं था। लेकिन सब छोड़ दिया और कहा, ''**तृणादपि सुनीचेन, तरोरपि सहिष्णुना।** तृण के समान नीच होना होगा – अभिमानी, अहंकारी नहीं होना होगा। तरोरिव सहिष्णुना, यह कहकर मुझसे प्रश्न किया, ''तरोरिव क्या?'' मैंने उत्तर दिया, ''वृक्ष के समान।''

महाराजजी ने फिर प्रश्न किया, ''पेड़ में फल लगने पर क्या होता है?'' मैंने कहा, ''नीचे झुक जाता है।'' ''और पेड़ में फल न रहने पर क्या होता है? ऊँचे तन जाता है।'' यह कहकर अपनी गर्दन सीधे करके दिखाया और कहने लगे, ''देखो न, ठाकुर सिर नीचा किये हुए ही चले गए। जिसे भक्तिलाभ हुआ है, वह कभी अहंकारी नहीं होगा। श्रीश्रीठाकुर की ओर दृष्टि रखना। उनको पा गए, तो सब पा गए। वे आनन्द की खान हैं। फिर सर्वश्रेष्ठ ज्ञान और सर्वश्रेष्ठ शान्ति हैं वे। यह संसार के पार की अवस्था है।

तीन कामनाओं का कभी त्याग नहीं करना

विहाय कामान्यः सर्वान्पुमांश्चरति निःस्पृहः।
निर्ममो निरहङ्कारः स शान्तिमधिगच्छति।।२/७१।।

समस्त कामना त्याग करने को कहा है। लेकिन रामायण में तीन कामनाएँ त्याग करने को निषेध किया है। कौन-सी तीन कामनाएँ? रामायण में कहा गया है, नान्या स्पृहा, लेकिन भक्तिं प्रयच्छ निर्भरां मे, कामादि दोष रहितं। ठाकुर क्या चाहते थे? शुद्धा भक्ति। शुद्धा, अमला, निष्काम भक्ति। बहुत कठिन मार्ग चुन लिया है, क्षुरस्य धारा निशिता।''

बाद में पूजनीय शान्तानन्द जी महाराज की बात उठी। वे बहुत दिन बाद मठ में आये हैं। जब मैंने बताया कि मैं उनको प्रणाम करने गया था, तब पूजनीय महाराज ने पूछा, ''कुछ प्रश्न किया था?'' मैंने उत्तर दिया, ''नहीं, उस समय वे स्नान करने जा रहे थे।'' मेरा उत्तर सुनकर कुछ तिरस्कार करते हुए उन्होंने कहा, ''साधु के पास जाने पर उपदेश माँगना होता है, प्रश्न करना होता है – महाराज, कैसे भक्ति-प्राप्त हो? यह भी मैं सिखाऊँ? भक्ति प्राप्त होने पर भी प्रश्न करना चाहिए, जिससे और अधिक भक्ति प्राप्त हो, उसके लिए ! नहीं, तुम लोगों को भक्ति प्राप्त हो गयी

है ! अब और प्रश्न करने की क्या आवश्यकता है?''

५ दिसम्बर, १९५४ जप-ध्यान जम नहीं रहा

आज शाम को पूजनीय महाराजजी के पास गया था। बातचीत के क्रम में मैंने कहा, ''महाराज, ध्यान-जप जम नहीं रहा है। जैसे ऊपर ही ऊपर तैरने जैसा हो रहा है।'' उन्होंने कहा, ''ऊपर-ऊपर तैरने से तो ऊपर ही ऊपर तैरते रह जाओगे। विवेक अपने संग रखना। प्रत्येक समय विचार करना, क्यों मन विक्षिप्त हो रहा है। क्यों उसमें मन नहीं बैठ रहा है। इस समय जो जितना ही वाह-वाह क्यों न करे, किसी भी तरह कुछ नहीं होनेवाला। उनमें मन को बैठाना होगा। उनके लिए रोना होगा। पढ़ा नहीं है, ठाकुर कैसे रोते थे? कौन क्या कह रहा है, देखने मत जाना। वचनामृत पढ़ता है?'' 'हाँ' कहा, तो महाराजजी बोले, ''वहाँ ठाकुर ने क्या कहा है?'' मैंने कहा, ''ईश्वर ही एकमात्र सत्य है और सब अनित्य है। उनको व्याकुल होकर पुकारने से वे दर्शन देंगे ही देंगे।''

महाराज – ''किन्तु ! उन्हें अधिकाधिक अपना बना लेना होगा। तुम लोगों को अभाव का बोध ही नहीं होता। और ये सब भी आएँगे कहाँ से? प्रत्येक समय सोचना, किसलिये आये हो यहाँ? घंटा बजा, चाय पी, टिफिन खाया, इसीलिए आए यहाँ? संसार में रहने पर कितना कष्ट करना होता। सिर का पसीना तक बहाना होता। यहाँ तो वैसा कुछ भी कष्ट नहीं उठाना पड़ता।''

२७ दिसम्बर, १९५४

डाँट नहीं पड़ने से क्षति

रात को पूजनीय महाराज जी के पास गया था। आज उनकी चरण-सेवा करने का थोड़ा सुयोग पाकर धन्य हुआ। लगता है, पैर खूब दर्द कर रहा था। इसीलिए अन्त में उन्होंने स्वयं ही बता दिया कि कैसे पैर दबाना होगा। पैर दबा देने पर खूब आराम अनुभव कर रहे हैं। बाद में बातों के क्रम में मैंने जब बताया कि पूजनीय उपेन महाराज बहुत स्नेह करते हैं और कभी गाली-वाली नहीं देते, तो पूजनीय महाराज बोले, ''देख, तू इस समय समझ नहीं पा रहा है कि तेरी क्षति हो रही है। इसके बाद जब दूसरी जगह जायेगा, तब कौन तुझको इस तरह 'बच्चा-बच्चा' करेगा? केवल स्नेह पाने से नहीं होगा, मनुष्य नहीं हो पायेगा। स्नेह पाकर जैसा हँस रहा है, डाँट-फटकार के बाद यदि वैसा ही हँस पाएगा, तब समझना, ठीक रास्ते पर चल रहे हो – **सुखदुःखे समे कृत्वा लाभालाभौ जयाजयौ**। हमलोगों को ठाकुर की सन्तानों के पास कितनी डाँट-फटकार मिली है।''

१ जनवरी, १९५५

संस्कृत में बात कर सकते हो?

आज रात पूजनीय महाराजजी के पास गया, तो उन्होंने जानना चाहा कि हमारे आश्रम में संस्कृत पढ़ाने को पंडित आते हैं कि नहीं। जब मैंने उत्तर दिया, 'आते हैं', तो उन्होंने प्रश्न किया, ''तुम संस्कृत में बात कर सकते हो?''

मैंने कहा, ''नहीं।''

उत्तर सुनकर महाराजजी ने कहा, ''तुम लोग न इधर के हो, न उधर के। अधकचरे ही रह गए। मैं समझता था, तुम तो खूब साधन-भजन कर रहे हो या फिर खूब शास्त्रचर्चा कर रहे हो, किन्तु केवल आडम्बर है !

२ जनवरी, १९५५

आज रात को महाराजजी के पास बैठा था तभी एक वयस्क संन्यासी ने आकर पूजनीय महाराज जी को प्रणाम किया और पास बैठ गए। वे कलकत्ता से आये हैं पूजनीय निखिलानन्द जी को विदा करने। पूजनीय निखिलानन्द जी आज अमेरिका लौट रहे हैं। उन वयस्क संन्यासी महाराज के साथ इस सम्बन्ध में दो-चार बातें होने के बाद ही पूजनीय महाराज गम्भीर होकर बोलने लगे – ''समझे चि, ठाकुर का ऐश्वर्य, भीतर का ऐश्वर्य हम कितना प्राप्त कर सके हैं, इसी में सार्थकता है। एक बार स्वामी विरजानन्दजी को स्टेशन पर छोड़ने गया था। क्या भीड़ थी ! कितनी फूलमालाएँ, फल, मिठाई ! महाराज (पूज्य ब्रह्मानन्दजी) को भी स्टेशन छोड़ने गया हूँ, कितने लोग आते थे ! ठाकुर भी तो इसी रास्ते से कामारपुकुर जाते थे, शायद बगल में एक चटाई और हाथ में एक लालटेन लेकर इस हावड़ा स्टेशन से ही गाड़ी पर चढ़ते थे। आज ठाकुर का बाहर का ऐश्वर्य हमलोग खूब भोग कर रहे हैं। लेकिन हमलोगों को सोचने की जरूरत है कि उनका भीतर का ऐश्वर्य हमने कितना प्राप्त किया है। और समझे चि, यह शान्ति प्राप्त करने का एकमात्र रास्ता है।'' चि के साथ पूजनीय महाराज जी की बात चल रही थी, तभी श्रीमती डेविडसन और एक महिला भक्त, जो पूजनीय निखिलानन्दजी के साथ अमेरिका से आयी हैं और उनके साथ ही लौट जाएँगी, पूजनीय महाराज जी से

विदा लेने आईं। महाराजजी को इन दोनों ने प्रणाम किया तो उन्होंने उनसे कहा, May his blessings be on you for ever. May the lord be with you forever. (उनका आशीर्वाद तुम लोगों पर हमेशा बना रहे। ईश्वर सदा तुम लोगों के साथ रहें !)

ठाकुर को स्मरण रखना

उन लोगों के विदा लेकर जाते ही पूजनीय महाराज जी ने कहा, ''विदाई एक दुखद कार्य है।'' थोड़ी देर बाद महाराजजी को प्रणाम करने निखिलानन्दजी आए। उनके घूटने टेककर प्रणाम करने पर पूजनीय महाराज 'आओ भाई' कहते हुए खड़े हो गए और पूजनीय निखिलानन्दजी महाराजजी से कहने लगे, ''महाराज, सिर पर जरा हाथ रख दीजिए।'' इस पर पूजनीय महाराजजी ने निखिलानन्दजी को गले लगाते हुये कहा, ''माथे पर हाथ जिनको रखना था, उन्होंने रख दिया है।'' (पूजनीय निखिलानन्दजी श्रीमाँ की कृपा प्राप्त करके धन्य हो चुके थे)। यह कहकर उनको सीने से और जकड़ लिया। विदा लेकर जाते समय महाराजजी ने निखिलानन्द जी से कहा, 'ठाकुर को याद रखना।' महाराजजी की बात सुनकर निखिलानन्दजी ने कहा, ''महाराज, मेरे लिए जरा ठाकुर से कहियेगा।''

पूजनीय निखिलानन्द जी और अन्य लोगों के चले जाने पर मैंने पूजनीय महाराजजी को एक दवा खाने को दी। तब उन्होंने बातों के क्रम में कहा, ''जानता है, मेरी भी अमेरिका जाने की बात हुई थी। शरत् महाराज (स्वामी सारदानन्द जी) ने चिट्ठी लिखी थी – तुमको आदेश देने पर क्या तुम जाओगे? मैंने उत्तर में लिखा था, दुहाई महाराज की, दया करके यह आदेश मत दीजियेगा। तब मेरी जगह प्रणवानन्द को भेजा, बाप रे ! बच गया !'' बाद में बोले, ''दिनेश (स्वामी निखिलानन्द जी) ने बहुत काम किया है। कथामृत, उपनिषद् सब अनुवाद किया है। थाउजैंड आईलैंड पार्क (सहस्त्रद्वीपोद्यान) का मकान खरीदा है। वहीं तो स्वामी जी का सब कुछ है।''

१९ मार्च, १९५५

उपहार क्या दूँ?

आज शाम को पूजनीय महाराजजी के पास गया था। कल वे मालदा जाने को कलकत्ता प्रस्थान करेंगे। कल दिन में Institute of culture के १११ नं. रसा रोड के मकान में ठहरेंगे। परसों मालदा जायेंगे। महाराज के पास जाने के थोड़ी देर बाद ही स्वामी गोपालानन्द महाराज मिलने आये। रा.. बाबू पहले ही वहाँ थे। गोपालानन्द महाराज को पाकर महाराज अतीत की बहुत-सी बातें बताने लगे।

महाराज मद्रास जा रहे थे, रास्ते में भुवनेश्वर उतरकर पूजनीय राजा महाराज का दर्शन करना था। जाने के समय एक भक्त ने राजा महाराज के लिए अँग्रेजी मछली और बागबाजार का रसगुल्ला दिया; तीरथ महाराज की माँ ने छेना का पायस दिया। उन्होंने महाराज से कहा, ''बाबू, मैं एक पतला कपड़ा बाँध दे रही हूँ, ताकि कोयले के कण न पड़े। तुम जाते ही महाराज को यह खाने को देना।''

महाराज के लिए पायस जा रहा है, हवा न लगने से शायद खराब हो सकता है और कपड़ा खुला रखने से कोयले के कण पड़ सकते हैं, इसीलिए समूचे रास्ते हांड़ी को गोद में लिये हुए ले गए और आश्रम में पहुँचते ही राजा महाराज से बोले, ''महाराज, तीरथ महाराज की माँ ने यह छेने का पायस दिया है और पहुँचते ही आपको देने को कहा है।'' यह बात सुनते ही सेवक जल्दी-जल्दी कप और चम्मच ले आये, लेकिन राजा महाराज खाने को राजी नहीं हो रहे हैं और सेवक खाने के लिए उनसे अनुरोध कर रहे हैं। अन्त में राजी हुए और खाने बैठने से पहले खूब खुशी मन से महाराज से बोले, ''मैं तुमको कुछ उपहार दूँगा।'' और शिशु के समान 'क्या दूँ', यही खोजते हुए घूमने लगे। राजा महाराज को इस प्रकार व्यस्त होते देखकर महाराज ने कहा, ''महाराज, मैं उपहार नहीं चाहता, आशीर्वाद दीजिये कि जिससे मुझे भक्ति और विश्वास की प्राप्ति हो।'' राजा महाराज ने 'यह क्या है?' कहते हुए, खोजकर पीतल का छोटा कमण्डलु लाकर देते हुए कहा, ''साधु को कमण्डलु का उपहार अच्छा ही हुआ।''

तब तो तुमने प्रसाद पा लिया

एक बार की बात है। पूजनीय राजा महाराज काशीधाम आये थे। आने के बाद ही उनके सेवक अस्वस्थ हो गए। महाराज की रसोई कौन बनाये? अन्त में भार आ पड़ा महाराज के ऊपर। महाराज ने कहा, ''मैं तो रसोई का कुछ भी नहीं जानता था, फिर भी खूब उत्साह के साथ लग गया। एक की जगह पाँच बर्तन लाता और वृद्ध साधु कहते, 'यह क्या बच्चा? पकाओगे केवल झोल और भात; इतने बर्तन

क्या करोगे?' रोज खाना पकने लगा। एक दिन राजा महाराज ने बड़ी के साथ एक तरकारी बनाने को कहा। मैंने तो भरसक अच्छी तरह खाना बना दिया। खाने के अन्त में मैंने जानना चाहा, कैसा हुआ है? महाराज ने उत्तर दिया, ''प्रसाद था, खाकर देख लो।'' जल्दी-जल्दी दौड़कर गया और प्रणाम करके कहा, महाराज, मुझसे भारी अपराध हुआ है, दो बार नमक डाल दिया, किसी दूसरे दिन अच्छी तरह खाना बना दूँगा।'' वे हँसकर बोले, 'तब तुमने प्रसाद पा लिया।'

विश्वनाथ मन्दिर में झाड़ू लगाया

एक दिन पूजनीय राजा महाराज, योगिन-माँ, शरत् महाराज विश्वनाथजी का दर्शन करने गए। मैं भी उनके साथ था। महाराज देव-देवी के दर्शन को जाने पर चादर में भीतर हाथ रखकर जप करते थे। कभी-कभी बाहर भी करते थे। महाराज धीर-स्थिर, विश्वनाथ मन्दिर में प्रवेश कर रहे थे। प्रवेश करते ही देखा कि एक झाड़ू लगानेवाला झाड़ू लगा रहा है। राजा महाराज ने उसके हाथ से झाड़ू लेकर थोड़ा झाड़ू लगाकर फिर उसको लौटा दिया।'' यह घटना बतलाकर महाराज ने कहा, ''इसका अर्थ क्या है, जानते हो? इसका अर्थ है, हे विश्वनाथ, मैं आपके दरवाजे पर झाड़ू लगानेवाला होकर भी रह सकता हूँ।''

कल्याणेश्वर जाग्रत शिव हैं

एक दिन की बात है। उस समय भी मठ में जी.टी. रोड जाने का नया रास्ता नहीं था। राजा महाराज घूमने निकले थे, मैं उनके साथ था, राजा महाराज हेमपाल लेन से जी.टी. रोड पर जाकर कल्याणेश्वर तला पहुँचे। वहाँ जाकर मन्दिर में प्रवेश करके महाराज बोले, ''थोड़ा गंगाजल ला सकते हो? शिव के मस्तक पर चढ़ाऊँगा।'' मैं मन ही मन सोच रहा था, देखो, मठ में बैठे-बैठे बोल देने पर भी गंगाजल, फूल, बेलपत्र सब लाया जा सकता था। जो हो, बाहर आकर देखते ही दृष्टि पड़ी, एक वृद्धा एक लोटा गंगाजल लेकर मन्दिर की ओर आ रही थीं। पास जाकर उनसे कहा, ''अपना लोटा थोड़ी देर के लिए देंगी? एक साधु मन्दिर में हैं, वे शिवजी के मस्तक पर जल चढ़ाना चाहते हैं।'' मेरी बात सुनकर वृद्धा बोलीं, 'भैया, यह तो मेरा अहोभाग्य है' और अपना लोटा मुझे दे दिया। महाराज को लोटा दिया, तो उन्होंने स्वयं शिवजी के मस्तक पर जल चढ़ाया, फिर मुझे भी चढ़ाने को कहा। घुटनों के बल मन्दिर में बैठने से राजा महाराज के पैर में कीचड़ लग गया था। मैंने कपड़े से महाराज के पैर पोंछ दिये। अन्त में उन्होंने कहा, ''देखो, ठाकुर के साथ पहले-पहल यहाँ आया था। उस दिन उन्होंने कहा था, 'ये बड़े जाग्रत शिव हैं !''

ठाकुर की शिक्षा

एक दिन राजा महाराज जी.टी. रोड पर घूमने निकले थे। मैं साथ में था। रास्ते में एक ईंट का टुकड़ा पड़ा देखकर उसे पाँव से ठेल-ठेल कर हटाने लगे, यह देखकर मैंने हाथ से उस ईंट को हटा दिया। तब महाराज ने कहा, 'देखो, ठाकुर से यह सीखा हूँ।' इस घटना का वर्णन करके महाराज ने कहा, ''देखो ठाकुर किस प्रकार की शिक्षा देते थे।''

एक बार पूजनीय शशि महाराज के साथ एक क्लास में गया था। वहाँ वह गीता पढ़ाते थे। वे पढ़े जा रहे थे और उनके छात्रों में कोई ऊँघ रहा था, कोई सो रहा था। मठ में लौटकर मैंने कहा, ''महाराज, यह क्या ! आप पढ़ा रहे थे और वे अभागे सो रहे थे !'' इस पर शशि महाराज मुझे फटकारते हुए बोले, ''तुम वह सब क्यों देखते हो? किसने सुना और किसने नहीं सुना, उसमें मेरा क्या? मैं ठाकुर का नाम लेता हूँ, उनकी बात कहता हूँ, उससे मुझे ही आनन्द मिलता है !''

नाम-यश स्पर्श न करे

शशि महाराज व्याख्यान देकर या क्लास लेकर आते ही स्वामीजी के चित्र के पास खड़े होकर कहा करते, ''भाई, तुमने मुझे यहाँ भेजा है, देखना जिससे नाम-यश मुझको स्पर्श न करे।''

बनारस में राजा महाराज को बटुक भैरव आदि का दर्शन कराने ले जाता था। मैं साथ में कुछ पैसा रख लेता था। क्योंकि महाराज देवस्थल में जाकर कहते, ''पैसा भी नहीं लाया गया।'' रोज ही एक-दो पैसा उनके निर्देशानुसार मंदिर में देता था और महाराज कहते थे, ''देखो, सु के पास से ले लेना।'' एक दिन अचानक महाराज को पैसे की बात याद आ गई। तुरन्त मुझे बुलाया। मेरे जाते ही बोले, ''क्यों जी, पैसा ले तो लिया है न !'' मैंने कहा, ''महाराज, किसका पैसा कौन लेगा? आपका पैसा आपको दिया है, मेरा क्या !'' महाराज ने सुनकर कहा, ''नहीं, नहीं, यह नहीं होगा। Insolvency declare (दिवालिया घोषित) हो जाने के बाद आदेश आया, तो कहाँ से पाऊँगा !''

एक दिन महाराज (राजा महाराज) ने मुझसे कहा, ''देख, ६.३० बजे मुझको यह दवा खाने को देना।'' और सु.. को बुलाकर कहा, ''मैं ७.३० बजे खाऊँगा।'' मैं वह बात एकदम भूल गया। ७ बजे याद आने पर महाराज के पास जाकर प्रणाम करके कहा, ''महाराज, मुझसे भारी अपराध हो गया, मुझे क्षमा कर दें।'' केवल इतना ही कहा, लेकिन क्या अपराध हुआ है, यह नहीं बताया। महाराज ने बस इतना कहा, ''क्या हुआ, बताओ न !'' अन्त में बताया। सुनकर महाराज ने कहा, ''सु.. को बुलाओ।'' सु आए, तो उनसे कहा, ''मैं आठ बजे खाऊँगा।'' और मुझसे बोले, ''दो, दवाई दो।''

प्रेम बिना ध्यान नहीं जमेगा

मा.. कहता है, आपका वह उपदेश अब भी मुझे याद है। मैंने पूछा, वह क्या ! तुमको मैंने कब उपदेश दिया ! मा. ने कहा, ''लोगों ने अब भी मठ 'ज्वाइन' नहीं किया था। एक बार कई मन आलू लेकर वे लोग भुवनेश्वर आये थे। उस समय मैं भी वहीं था। ऊपरी मंजिल के एक घर में हम तीन लोगों के ठहरने की व्यवस्था हुई थी। उन लोगों ने मेरे साथ खूब बातचीत की। बातों ही बातों में माँ ने कहा, देखिये, ध्यान तो जमता नहीं; तब मैंने कहा, उनके ऊपर प्रेम आया है क्या कि ध्यान जमेगा? मा.. अब भी कहता है, आपका वह उपदेश मैं नहीं भूला ! देखो, उनके ऊपर प्रेम लाना चाहिये, नहीं तो कुछ भी नहीं होगा।

जयरामवाटी

ठाकुर ने एकबार स्वामीजी से कहा था, देखो, गिरीश के साथ बहुत घुलना-मिलना नहीं। लहसुन की कटोरी हजार धोओ, गन्ध नहीं जाती। यह बात सुनते ही गिरीशबाबू ने आकर ठाकुर को पकड़ा, क्यों महाशय, क्या आपने यह बात कही है? ठाकुर बिलकुल चुप। मुँह से कोई बात नहीं और गिरीश थे कि रुपये में सोलह आना विश्वास लिये हुए थे – बोलिये, गन्ध जाती है कि नहीं? उनका भाव था कि ठाकुर का आश्रय मिला है और गन्ध नहीं जायेगी? बाइबिल में एक वचन है – यह मनुष्य के लिये असम्भव है, लेकिन ईश्वर के लिये कुछ भी असम्भव नहीं है। गिरीशबाबू का विश्वास ऐसा ही था। अन्त में ठाकुर को कहना पड़ा, हाँ, गन्ध जाती है ! आग में कटोरी तपा देने पर गन्ध चली जाती है।''

ठाकुर से झगड़ा

शशि महाराज को देखा है, ठाकुर के साथ झगड़ा करते थे। ठाकुर को भोग निवेदन करके बाहर आकर घूमते रहते थे। भाव में चेहरा लाल, दोनों हाथ छाती पर बाँधे हुए भाव से परिपूर्ण होकर कहते थे, ''प्राणवल्लभ प्रभु मेरे, प्राणवल्लभ प्रभु मेरे।'' एक दिन भोग लाते समय देखा कि दूध में एक मक्खी गिर गई है। देखते ही ठाकुर से क्या झगड़ा ठान बैठे ! बोले, तुम इतना भी नहीं कर सके ! मक्खी गिर गई, तुम उसे हाँक भी नहीं सके? मैंने तुम्हारा कोई अपराध नहीं किया। तुम मुझे इस तरह कष्ट क्यों दे रहे हो? यह घटना बतलाकर महाराज ने कहा, उनके ऊपर प्रेम था, तभी तो वे इस तरह झगड़ा कर सके ! ऐसा ही प्रेम चाहिये। ढीला-ढाला रहने से कुछ नहीं होगा !

केदारबाबा रोने लगे

एक बार जयरामबाटी में मैं और केदारबाबा गए थे। ज ने तब भी 'ज्वाइन' नहीं किया था। श्रीहट्ट (सिलहट) से कई भक्तों को लेकर माँ के पास आया था। इस समय रात के दस बजे होंगे। सोने जा रहा था। अचानक किसी ने आकर कहा, ''माँ आप लोगों को बुला रही हैं। सोचा, क्या कार्य हो सकता है ! मैं और केदारबाबा ने तुरन्त जाकर देखा कि माँ दोनों हाथों में दूध से भरे दो गिलास लिये खड़ी हैं। आते ही माँ ने कहा, ''देखो, थोड़ा ही दूध है, सभी को तो नहीं दे सकती। लेकिन उन लोगों के घर में माँ-बहन हैं, वे लोग कितना खाने को पाते हैं। लेकिन बेटा, तुम लोगों का कौन है? तुम लोगों को कौन खिलायेगा। लो, दूध पी लो। माँ की बात सुनते ही केदारबाबा रोने लगे। दूध और कौन पीएगा? अन्त में माँ ने उन लोगों को शान्त किया। हम लोग दूध पी चुके, तब माँ दोनों गिलास लेकर चली गई।

७ जून, १९५५

ठाकुर मेरे हैं, मैं ठाकुर का हूँ

आज महाराज जी ने मुझको कुछ सेवा का अधिकार देकर धन्य किया। जब सेवा कर रहा था, उस समय उन्होंने अनेक बातें बतलाईं। कहा, "देखो, ठाकुर ने कहा है न, जब तक पौधा बड़ा न हो जाय, उसके चारों ओर घेरा लगानी होती है। प्रारम्भ में बहुत शोर-शराबा ठीक नहीं। अत्यन्त निष्ठा के साथ जप-ध्यान करना, ठाकुर को पुकारना। प्रत्येक समय याद रखना, मैं ठाकुर का हूँ, ठाकुर मेरे हैं, और सब कुछ ठाकुर का है। यह मूल बात भूल न जाये। इस 'ज्ञान' रूपी काँटे से संसार का 'मेरा', यह कर्तृत्वाभिमानरूपी 'अज्ञान' काँटे को निकाल फेंकना होगा। कभी भी अभिमानी, अहंकारी मत बनना। सावधान ! कभी मत सोचना कि मैं कैसा जप-ध्यान कर रहा हूँ और वह आदमी कुछ नहीं कर रहा है। बातचीत में भी यह अहंकार मत करना। सभी ठाकुर के शरणागत हैं। जिसको जिस रास्ते से वे ले जा रहे हैं, वह उसी रास्ते से जा रहा है। ठाकुर के ऊपर अनुराग, प्रेम आना चाहिये। ध्यान, जप, पूजा जो अच्छा लगे, उसी के ऊपर अधिक जोर देना। नियमित जप-ध्यान करना। फिर भी ठाकुर की कृपा के बिना कुछ नहीं होगा। माँ ठाकुरानी मुझको ठाकुर के चरणों में सौंप गई हैं। उन्हीं को पकड़ा कर गई हैं। आज भी उन्हीं को पकड़े हुए हूँ। तुझे भी मैंने ठाकुर के चरणों में सौंप दिया है। हमेशा याद रखना, मैं उनके चरणों में अर्पित हूँ, उनको पकड़े रहूँगा।

आज सबेरे अ.. महाराज आये थे। कहा, तुम्हें बहुत कष्ट हो रहा है यहाँ रहने में? मैंने कहा, यह क्या कह रहे हैं आप? हम लोग तो वृक्ष के नीचे रहने वाले साधु हैं, तिस पर ऐसा सुसज्जित सुविधायुक्त घर; भला यहाँ भी असुविधा सम्भव है ! यह कथोपकथन बताकर महाराज ने मुझसे कहा, 'देखो, यह हमेशा याद रखना। देखना, कितनी भी समस्याएँ आएँगी, लेकिन यह मत भूलना।' अन्त में महाराज ने दिन में सोने से मना किया। कहा, रात को १० बजे सोकर भोर में चार बजे उठना। देखना, अच्छी नींद आएगी। सुबह शरीर हल्का अनुभव होगा। खूब आराम लगेगा। यह कहकर डॉ. सरकार की बात बोले। नौकरी करते समय की आदत पड़ चुकी है, इसीलिए आज भी (अवकाश प्राप्त होने के बाद भी) वे दिन में नहीं सोते। तुम लोगों के मन में तो बल है। तुम लोग क्यों नहीं कर सकते? निश्चय कर सकते हो !

डाँट खाकर भी मत भागना

बातचीत के क्रम में एक ब्रह्मचारी की बात मैंने महाराज को बतलाई। उसको डाँट-फटकार पड़ी, तो भाग गया। इस पर महाराज ने कहा, देखो, डाँट खाकर भागोगे क्यों? हमलोगों को महाराज लोगों (ठाकुर की सन्तानों) से कितनी डाँट-फटकार पड़ी है।

अहंकारी मत होना

रात को उपेन महाराज से, आज पूजनीय महाराज के साथ जो बातें हुई थीं, उन्हें बताने पर, वे मुझसे बोले, "देखो, बेटा, तुमको एक बात बताता हूँ, अहंकारी मत होना। महापुरुषों के पास रहने पर अहंकार आता है। अन्य लोग तो महाराज को प्रणाम करके ही चले जाते हैं और मैं उनके पास बैठा हूँ, उनके साथ बात कर रहा हूँ, इस प्रकार का अहंकार न होने पाये। यह कहकर उन्होंने दो लोगों का दृष्टान्त दिया, जिनके जीवन में महापुरुषों का घनिष्ठ सान्निध्य अहंकार के रूप में व्यक्त हुआ था।

८ जून, १९५५

आज महाराजजी की शुभ जन्मतिथि है। इस उपलक्ष्य में मठ में अनेक भक्तों का समागम हुआ था। उन लोगों ने महाराजजी को माला पहनाई थी। कई लोगों ने चरण-पूजा भी की थी। श्रीश्रीठाकुर की विशेष पूजा भी हुई थी। समवेत भक्तवृन्द ने दोपहर में मठ में प्रसाद पाया था। आज महाराजजी के आदेश से मैंने भी मठ में प्रसाद पाया। सबेरे कुछ क्षण महाराज के पास रहने का सुयोग हुआ था।

१० जून, १९५५

संसार में सभी क्षणभंगुर हैं, तो नौकरी स्थायी कैसे होगी?

आज शाम को महाराज के पास गया, तो उन्होंने आम और संदेश खाने को दिया। उसके बाद उनके साथ बात करते-करते थोड़ा उनका पाँव दबा दिया। इस पर महाराज बोले, "देखता हूँ, तूने नौकरी जुटा ली है।" मैंने कहा,

'यहाँ कितने दिन के लिए हैं ही आप।' उन्होंने कहा, ''यदि पूरे वर्ष रहूँ !'' मैंने कहा, 'नौकरी स्थायी कर दीजिये न !' इस पर महाराज ने हँसकर कहा, ''संसार में सब कुछ अस्थायी है, नौकरी कैसे स्थायी होगी?'' मैंने कहा, 'उससे क्या हुआ? इसे स्थायी कर दीजिये।'' उन्होंने कहा, ''तुम जिस अर्थ में कह रहे हो, उस दृष्टि से कोई भी व्यक्ति कोई स्थायी काम नहीं करता। आज एक काम कर रहा है, तो कल दूसरा। उम्र रहते जप-ध्यान, पढ़ाई-लिखाई, काम-काज सब एक साथ कर लो। काम खूब कर लिया और जप के समय ॐ नमः, यह नहीं चलेगा। सब एक साथ करना होगा।''

१९ जून, १९५५
ठाकुर ने सीखने के कितने तरीके बताये

आज रात को महाराज ने एक घटना बताकर प्रश्न किया, ''इससे तुम क्या शिक्षा लेते हो?'' मैंने कहा, ''संयत होकर चलना होगा।'' इस पर महाराज ने फिर प्रश्न किया, ''ठाकुर ने कितने प्रकार की सीखने की बात कही है?'' देखकर सीखना, ठोकर खाकर सीखना और सुनकर सीखना, यह बात मैं नहीं बता पाया, तो उन्होंने स्वयं ही बता दी। फिर प्रश्न किया, ''तुम किस प्रकार सीखोगे?'' मैंने कहा, ''देख और सुनकर।'' इस पर थोड़ा हँसकर महाराज ने पूछा, ''क्यों ठोकर खाकर नहीं सीखेगा?'' मैंने भी हँसकर जवाब दिया, ''नहीं।''

९ जनवरी, १९५५
प्राप्त करने की तीव्र इच्छा चाहिए

आज पूजनीय महाराज ने मुझको एक सुन्दर कैलेण्डर दिया। उन्होंने पूछा था, ''क्यों रे कैलेण्डर लेगा?'' मैंने कहा, ''दीजिये।'' मेरे बोलने में बहुत आग्रह नहीं था। इसीलिए मेरा उत्तर सुनकर महाराज ने कहा, ''तुम्हारी इच्छा नहीं है। इस तरह बोलने से क्या होगा ! इच्छा करनी होगी, नहीं तो पाएगा कैसे?'' तब मैंने कहा, ''महाराज, मुझको दीजिये, मेरी इच्छा है।'' तब मुझको मेरी पसंद के अनुसार सबसे सुन्दर कैलेण्डर दिया। देने से पहले उन्होंने यह जान लिया था कि मुझे कौन-सा कैलेण्डर पसंद है। उन्होंने कहा था, मेरे कमरे में टेबल के ऊपर कई कैलेण्डर हैं, लेते आओ।'' मैं ले आया, तो महाराज ने प्रश्न किया, ''इनमें से कौन-सा सबसे अच्छा है?'' मैंने एक दिखाकर कहा था, ''यह सबसे अच्छा है।'' वही उन्होंने मुझको दिया।

११ जनवरी, १९५५
ठाकुर से केला-मुली नहीं माँगना

आज शाम को महाराजजी के पास जाकर देखा, अनेक भक्त उनके कमरे में बैठे हैं। थोड़ी देर बाद उनके चले जाने पर मैंने महाराजजी के कमरे में प्रवेश किया। मेरे साथ रा.. बाबू ने भी प्रवेश किया। प्रवेश करते ही रोज की तरह महाराज ने प्रश्न किया, ''क्यों रे, तेरी क्या खबर है?'' उत्तर में 'अच्छा' कहकर महाराज को प्रणाम करके उनके पास बैठा ही था कि उन्होंने कहा, ''उन लोगों से कहा था, ठाकुर से केला-मूली की इच्छा मत करना।'' यह कहकर उन्होंने मुझसे पूछा, ''तुम ठाकुर से क्या चाहता है?'' मैंने उत्तर दिया, ''आपने जो बताया है वही।'' महाराज ने कहा था, ''श्रीश्रीठाकुर से शुद्धा, अमला, अहैतुकी भक्ति माँगना।'' मेरा उत्तर सुनकर महाराज ने कहा, ''उसके साथ अपने को जोड़ते तो हो ! या यह चाहते हो कि मैंने बता दिया है !'' मैंने 'हाँ' कहकर कहा, ''मैं उसके साथ और थोड़ा जोड़ देता हूँ।'' ''क्या जोड़ देते हो?'' महाराज ने प्रश्न किया। मैंने कहा, ''जब तुमने आश्रय दिया है, तो फिर दूर मत करना।'' मेरी बात सुनकर महाराज ने कहा, ''वही तो हुआ। भक्ति प्राप्त करने पर क्या वे फिर दूर हो सकते हैं ! इसीलिए तो भगवान् कहते हैं, मैं मुक्ति देते हुए नहीं डरता, लेकिन भक्ति देते हुए डरता हूँ। क्यों? क्योंकि भक्त की भक्तिडोर में बँधना पड़ता है इसलिए। ठाकुर ने क्या ही सुन्दर बात कही है, कभी भक्त चुम्बक होता है और भगवान सुई हो जाते हैं। शुद्ध-बुद्ध-मुक्त भक्त उनको भक्तिडोर में बाँध लेता है।'' **(क्रमशः)**

पृष्ठ ४९३ का शेष भाग

स्वामीजी का कथन ही मानों गाँधीजी का जीवन था। स्वामीजी एवं गाँधीजी के जीवन और दर्शन का तुलनात्मक अध्ययन वास्तव में एक गवेषणा का विषय है। यहाँ हमने कुछ तथ्यों को सूत्र-रूप में रखने का नम्र प्रयास किया है। इन दोनों महापुरुषों के जीवन और संदेश का अध्ययन-अन्वेषण हमें आगे भी लाभान्वित करता रहेगा। हरि ॐ तत् सत् ! **(समाप्त)**

सन्दर्भ सूत्र – **७.** विवेकानन्द साहित्य – ९/२२८ **८.** वि.सा. २/३६०-३६१ **९.** वि.सा.५/१९३ **१०.** हे भाई।

हे युवको ! अपना विकास स्वयं करो

स्वामी गुणदानन्द, रामकृष्ण मठ, नागपुर

स्वामी विवेकानन्द कहते हैं, ''अपने भाग्य के लिए मैं स्वयं उत्तरदायी हूँ। मैं स्वयं अपने शुभ-अशुभ दोनों का कर्ता हूँ।'' स्वामीजी के इसी कथन को सत्य करता हुआ शारीरिक, मानसिक, भावनात्मक तथा अन्य विपरीत परिस्थितियों से अपने को बाहर निकाल कर स्वयं अपने भाग्य का निर्माण करने वाले व्यक्ति डिमोस्थेनिस के जीवन से प्रेरित यह लेख है।

जीवन में सफलता प्राप्त करने हेतु हर कोई समस्याओं और चुनौतियों का सामना करते हुए संघर्षों से जुझता है। विपरीत परिस्थितियाँ, उलझनें तथा भ्रान्तियाँ जीवन में सकारात्मक तथा रचनात्मक भूमिका निभाती हैं। प्रतिकूल परिस्थितियाँ तथा कठिनाइयाँ यह इंगित करती हैं कि इनका सामना करने से ये मानव को निरपवाद रूप से जीवन के उच्च आयामों में ले जाती हैं। कई महान् व्यक्तियों के ज्वलन्त उदाहरण देखने को मिलते हैं, जिन्होंने शारीरिक, मानसिक, तथा सामाजिक कठिनाइयों से जूझते हुए संघर्ष किया और जीवन में सफलता प्राप्त की।

ग्रीक के किंग जार्ज VI के राजनीतिक सलाहकार तथा कुशल वक्ता डिमोस्थेनिस एक ऐसे व्यक्तित्व थे, जिन्होंने अपने अधिकार को प्राप्त करने के लिए शारीरिक, मानसिक, सामाजिक कठिनाइयों से जूझते हुए विपरीत परिस्थितियों में संघर्ष किया। उन्होंने स्वयं को प्रशिक्षित करके आत्मविश्वास के द्वारा प्रतिकूल परिस्थितियों में हार नहीं मानी।

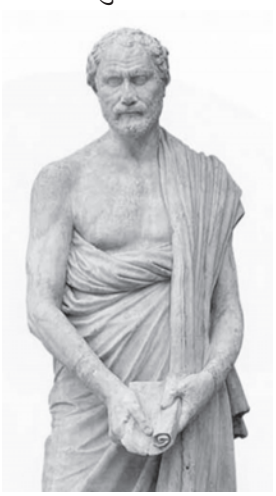

डिमोस्थेनिस

विपरीत परिस्थितियों का सामना

डिमोस्थेनिस का जन्म ३८४ ईसा पूर्व एथीन्स में एक धनी परिवार में हुआ था। ५ वर्ष की आयु में वे अनाथ हो गए। उनके परिवार के पालक डिमोस्थेनिस के नाम पर लिखी धन-सम्पत्ति को हड़पना चाहते थे। इसलिए उनके परिवारवालों ने उनका ५ वर्ष की आयु से ही शोषण करना प्रारम्भ कर

दिया। वे उन्हें धमकाने लगे, व्यर्थ डाँटते रहते थे, उन्हें विद्यालयीन शिक्षा से वंचित रखने लगे, उनके पालन-पोषण में कभी ध्यान नहीं देते थे और हमेशा नीचा दिखाकर सबके सामने उनका मजाक तथा अपमान करते थे। इस प्रकार के शोषण तथा प्रताड़नाओं के कारण उनका न तो शारीरिक विकास हुआ, न ही मानसिक और न सामाजिक। ५ वर्ष की आयु में कुपोषण के शिकार हुए और उनमें एक साथ बहुत सारे रोग पनपने लगे। उनमें एक विचित्र प्रकार का वाक् रोग (inarticulate speech) विकसित हुआ। इस रोग में व्यक्ति अपनी भावनाओं और बातों को स्पष्ट रूप से व्यक्त नहीं कर पाता है और यदि अपनी भावनाओं और शब्दों को व्यक्त करता है, तो स्पष्ट रूप से समझ नहीं आता कि क्या कहना चाहता है। उनकी आवाज इतनी पतली हो गई थी कि एक गज दूरी तक भी नहीं सुनाई देती थी। हकलेपन (Stammering) की बीमारी भी विकसित हुई। इसके साथ चक्कर-से आते थे। जहाँ कहीं भी जाते लोग ही नहीं परिवार के सदस्य भी उनका खूब मजाक और अपमान करने लगे। इस प्रकार शारीरिक, मानसिक, सामाजिक प्रताड़नाओं के कारण उनका शरीर बीमारियों का घर बन गया।

अधिकार के प्रति जागरूकता

डिमोस्थेनिस जैसे-जैसे बड़े होने लगे, लोग उन पर व्यंग्य कसने लगे। अब उनकी आयु १६ वर्ष की थी। वे फटे-पुराने कपड़ों में गलियों से गुजर रहे थे, तभी अचानक उनके एक वृद्ध दादा ने उन्हें सचेत किया कि डिमोस्थेनिस तुम्हें क्या हो गया है? अपना होश सम्भालो, इस तरह

पागल बनकर क्यों घूम रहे हो? क्या तुम सच्चाई जानते हो? तुम्हारे पालक तुम्हारी सम्पत्ति के अधिकारी नहीं है। वे तुम्हारी सारी सम्पत्ति हड़पना चाहते हैं। वास्तव में तुम्हीं इतने बड़े घर के अधिकारी, मालिक हो। ये बातें सुनकर डिमोस्थेनिस स्तब्ध रह गये, क्योंकि जीवन में पहली बार उन्होंने किसी को उनसे इस प्रकार प्रेम से बातें करते हुआ सुना। वृद्ध दादा की बातों से वे सचेत हुए और चिन्तन करते हुए वहाँ से जा ही रहे थे कि रास्ते में उन्होंने एक राजनेता को बहुत बड़ी जनसभा को अपनी प्रभावशाली वक्तृता से आकृष्ट और सम्बोधित करते हुए देखा। डिमोस्थेनिक ने मन ही मन दृढ़ निश्चय किया कि प्रभावशाली वक्तृता में कुशलता प्राप्त करके वे भी एक अद्वितीय वक्ता बनेंगे।

स्वयं का प्रशिक्षण

डिमोस्थेनिस ने विपरीत परिस्थितियों में संघर्ष किया। और स्वयं को प्रशिक्षित किया। डिमोस्थेनिस अपने वृद्ध दादा से सलाह लेने गए। उन्होंने उन्हें सलाह दी कि वे सबसे पहले एक अच्छे चिकित्सक के पास जाकर वाक् रोग की चिकित्सा करा ले। चिकित्सक ने कहा कि इस रोग का कोई पक्का उपचार नहीं हो सकता है। कुछ लोगों ने उन्हें परामर्श दिया कि एक विशेष पत्थर के बारे में ऐसी मान्यता है, उसे जिह्वा के नीचे रखने से बोलने का प्रयत्न करने पर वाक् रोग (inarticulate speech) में सुधार हो जाता है। डिमोस्थेनिस ने उनकी बातों पर विश्वास किया और उस पत्थर को ढूँढ़ निकाला। उसके बाद वह प्रतिदिन समुद्र के तट पर जाते और खूब जोर से ऊँची आवाज में बोलने का प्रयास करते। उससे उनकी आवाज में सुधार हुआ, उनका हकलाना भी कम हो गया और वाक् रोग (inarticulate speech) भी कम हो गया। इस प्रकार एक अद्वितीय तथा कुशल वक्ता बनने के सपने को साकार करने हेतु वे अकेले ही विचरण करते और एकान्त में रहते। उन्होंने अपने आधे सिर के यानी एक तरफ के बाल भी कटवा दिये थे। वे घर में भी भूमिगत रहते, जहाँ पर कूड़ा-कचरा पड़ा था और वहाँ एक दर्पण के सामने खड़े होकर बोलते हुए कल्पना करते मानो वे हजारों लोगों को सम्बोधित कर रहे हों। अब लोगों को लगने लगा डिमोस्थेनिस पागल हो गया है। वे वाचनालय जाते और वहाँ इतिहास, राज्य तथा कानून सम्बन्धित पुस्तकों का अध्ययन करते। वे किसी को अपने आसपास नहीं आने देते और यदि कोई उनके पास आने की कोशिश करता, उसे पत्थर से मारकर भगा देते। वे यह सब इसलिए कर रहे थे, क्योंकि वे चाहते थे कोई उनके इस प्रयास में बाधा न डाले। १६ वर्ष से २० वर्ष तक के अन्तराल में वे जनता के सामने से गायब हो गए। सभी को लगा कि वे पागल हो गये हैं, अब वापस नहीं आयेंगे।

चुनौतियों को स्वीकारना

डिमोस्थेनिस शारीरिक, मानसिक, सामाजिक कठिनाइयों से युक्त तनावपूर्ण तथा प्रतिकूल परिस्थितियों में सकारात्मक सोच से समस्या का सामना करने के लिए उद्यत हुए। उन्होंने आत्मविश्वास का विकास किया तथा अपनी प्रतिभा को कुशलता से अभिव्यक्त किया।

२०वें वर्ष यानी चार वर्ष के अन्तराल के बाद डिमोस्थेनिस अचानक जनता के समक्ष उपस्थित हुए। वे अपने वृद्ध दादा के पास गये और उनसे कहा, 'वे अपने परिवारवालों के विरुद्ध न्यायालय में मुकदमा करेंगे और सम्पत्ति पर अपना अधिकार प्राप्त करेंगे।' उनके दादा ने कहा कि मैंने तो केवल सम्पत्ति पर तुम्हारे अधिकार को तुमसे अवगत कराने के लिए कहा था, मुकदमा करने के लिए नहीं। वे डिमोस्थेनिस को समझा रहे थे कि ऐसा मत कर, कम से कम अभी तक तुम्हें रहने के लिए घर तो मिल रहा है, उसके बाद तुम्हारे परिवार वाले तुमको घर से निकाल देंगे और तुम बेघर हो जाओगे। डिमोस्थेनिस ने दृढ़ निश्चय कर लिया था कि वे यह मुकदमा अवश्य ही लड़ेंगे। सभी लोग कह रहे थे कि डिमोस्थेनिस यह मुकदमा नहीं जीत पायेगा तथा वह किसी काम का नहीं रहेगा। क्योंकि उनके परिवारवालों के पास अच्छे से अच्छे वकील थे और वे उनसे हार जायेंगे। लेकिन उनको भी पूरा विश्वास था कि वे मुकदमा जीत जायेंगे।

एक कुशल तथा अद्वितीय वक्ता

डिमोस्थेनिस ने संघर्षों से जूझते हुए अपने स्वभाव के अनुरूप स्वयं का विकास किया तथा अनुभव प्राप्त किये। एक दिन डिमोस्थेनिस अपने सारे दस्तावेजों के साथ न्यायालय गया और मुकदमें की सुनवाई प्रारम्भ हो गई। अब डिमोस्थेनिस ने प्रभावशाली वक्तृता में कुशलता प्राप्त कर ली थी। इसी बीच न्यायाधीश ने देखा कि डिमोस्थेनिस के विपक्षी परिवारवालों के पास मुकदमा लड़ने के लिए

वकील है, परन्तु डिमोस्थेनिस के पास नहीं है। न्यायाधीश ने डिमोस्थेनिस से कहा मुकदमा लड़ने के लिए तुम्हारा वकील कौन है? डिमोस्थेनिस ने कहा, कोई नहीं है, मैं स्वयं ही अपना मुकदमा लड़ने के लिए तैयार हूँ। न्यायालय की कार्यवाही प्रारम्भ हुई। अब डिमोस्थेनिक ने अपना वक्तृत्व प्रारम्भ किया और लगभग ४० मिनट तक पहली बार राज्य के इतिहास में किसी ने शुद्ध ग्रीक भाषा में बिना किसी वकील की सहायता से ठोस प्रमाणों के साथ अपने पक्ष में दलीलें रखीं। डिमोस्थेनिस ने अपना पक्ष सोच-विचारकर तर्कसंगत तथा युक्तिपूर्वक रखा और विरोधी पक्ष के वकील कुछ कर नहीं पाये। उनके सारे दावे धराशायी हो गए। सब प्रतिष्ठित वकील की डिग्रियाँ तथा उपाधियाँ डिमोस्थेनिस के वक्तृत्व के सामने नहीं टिक पाईं। उनकी सारी दलीलों का डिमोस्थेनिस ने ऐतिहासिक तथा पक्के प्रमाणों के साथ एक-एक करके खण्डन किया और अन्त में हथियाई गयी सम्पत्ति पर अपने अधिकार को न्यायालय में न्यायाधीश के सामने प्रमाणित किया। ग्रीक के इतिहास में यह पहली बार हुआ कि किसी ने न्यायालय में बिना किसी वकील के ४० मिनट तक शुद्ध भाषा में एक ऐसी वक्तृता दी, जो अपने आप में अद्वितीय थी। इस प्रकार न्यायाधीश ने डिमोस्थेनिस के पक्ष में न्याय दिया और डिमोस्थेनिस को सम्पत्ति पर अपना अधिकार प्राप्त हुआ। उनका भाषण इतना प्रसिद्ध हुआ कि अगले दिन वहाँ राजा ने उन्हें अपने दरबार में राजनीतिक सलाहकार बनाने का निमंत्रण दिया।

उपसंहार

इस प्रकार हम देखते हैं कि डिमोस्थेनिस ने स्वयं को प्रशिक्षित किया। विपरीत परिस्थितियों में संघर्ष किया। शारीरिक, मानसिक, सामाजिक कठिनाइयों से जूझते हुए प्रतिकूल परिस्थितियों में हार नहीं मानी। उन्होंने सकारात्मक सोच, आत्मनियंत्रण, स्वयं को व्यक्त करने के लिए दूसरों को सुनने तथा समझने का प्रयास किया। तनावपूर्ण परिस्थितियों में वक्तृता का कौशल सीखा, कुटिल, घोर प्रताड़नाओं के सामने भावनात्मक नियंत्रण सीखा, अपने स्वभाव के अनुरूप स्वयं का विकास किया और अपनी प्रतिभा को एक कुशल तथा अद्वितीय वक्ता के रूप में अभिव्यक्त किया। अन्त में संघर्षों से जूझते हुए अनुभव प्राप्त किये। अपने अधिकार के बारे में जागरूक हुए और समस्या का सामना करने लिए उद्यत हुए। आत्मविश्वास का विकास किया और अपने अधिकार को प्राप्त किया।

डिमोस्थेनिस के जीवन से युवाओं को आशावादी होने की सीख लेनी चाहिए। चाहे कोई भी चुनौती हो उसका सामना किया जा सकता है और हर समस्या का सामाधन होता है। युवाओं को सभी चुनौतियों को स्वीकार करना होगा। क्योंकि युवा अवस्था ही जीवन्त जीने की, ऊर्जा से ओतप्रोत, महत्त्वाकांक्षी तथा उच्च आदर्शों से भरी होती है। आज के युवाओं के पास विकास के अद्वितीय अवसर हैं। बस आवश्यकता है अपने अन्तर में निहित सामर्थ्य को जगाने और अपनी प्रतिभा को अभिव्यक्त करने की। ○○○

पृष्ठ ४८८ का शेष भाग

बल्कि अपने शारीरिक, मानसिक, बौद्धिक विकास के साथ व्यावहारिक और सामाजिक विकास भी करें, इस ओर दृष्टि भी अभिभावकों को रखनी चाहिये।

बहुत से बच्चे परीक्षा में उच्चतम अंक पाकर भी थोड़ी-सी समस्याएँ आने पर स्वयं में संघर्ष करते हुये आत्महत्या कर लेते हैं। वे अभिभावकों को बताते भी नहीं। अत: अभिभावक बच्चों से मित्रवत् व्यवहार करें, उन्हें अपनी समस्यायें बताने का अवसर दें, उनसे स्नेह करें। आज के वाट्सअप युग में अभिभावक और बच्चे दोनों को दोनों से मिलने का समय नहीं मिलता। ऐसा नहीं होना चाहिये। आफिस से आने के बाद अभिभावक अपने बच्चों से मिलें और उनसे उनके दिनभर के कार्यों के बारे में प्रेम से पूछें। कुछ देर उनके साथ समय बितायें।

बंगाल की एक माताजी ने एक घटना सुनाई थी। एक दिन वे अपनी सहेली के यहाँ गयीं। उन्होंने देखा कि वे एक दो-तीन महीने के बच्चे के शरीर में तेल मालिश कर रही हैं और स्वामी विवेकानन्द का नाम सुनाये जा रही हैं। उन्होंने कहा कि यह छोटा-सा बच्चा क्या समझेगा कि तुम विवेकानन्द का नाम सुना रही हो? उनकी सहेली ने कहा, मैं इस तेल के साथ विवेकानन्द का नाम भी इसके रग-रग में प्रवेश करा दे रही हूँ। सचमुच अब बड़ा होने पर वह विवेकानन्दमय जीवन ही जी रहा है। यह है संस्कारों का प्रभाव। इसलिये बच्चों को सुसंस्कार दीजिये। ○○○

प्रश्नोपनिषद् (३०)

श्रीशंकराचार्य

(सनातन वैदिक धर्म के ज्ञानकाण्ड को उपनिषद् कहते हैं। हजारों वर्ष पूर्व भारत में जीव-जगत् तथा उससे सम्बद्ध गम्भीर विषयों पर प्रश्न उठाकर उनकी जो मीमांसा की गयी थी, ये उन्हीं के संकलन हैं। वैदिक धर्म की पुन: स्थापना हेतु आचार्य ने इन पर सहज-सरस भाष्य लिखकर अपने सिद्धान्त को प्रतिपादित किया था। प्रश्नोपनिषद् पर लिखे उनके भाष्य का हिन्दी अनुवाद 'विवेक-ज्योति' के पूर्व-सम्पादक स्वामी विदेहात्मानन्द जी द्वारा किया गया है, जिसे 'विवेक-ज्योति' के पाठकों हेतु प्रस्तुत किया जा रहा है। –सं.)

चूँकि सुषुप्ति काल में श्रोत्र आदि अर्थात् शब्द आदि का बोध करानेवाले उपकरण मन में एकीभूत अर्थात् मानो अपने कर्म से विरत हो जाते हैं, अत: तब उस निद्रावस्था में, यह देवदत्त आदि नामवाला व्यक्ति न सुनता है, न देखता है, न सूँघता है, न स्वाद लेता है, न छूता है, न बोलता है, न ग्रहण करता है, न आनन्द लेता है और न मल-मूत्र-त्याग करता है और न हिलता है; लोग कहते हैं कि यह तो सो रहा है।

प्राणाग्नय एवैतस्मिन्पुरे जाग्रति। गार्हपत्यो ह वा एषोऽपानो व्यानोऽन्वाहार्यपचनो यद्गार्हपत्यात्प्रणीयते प्रणयनादाहवनीयः प्राणः।।४/३।।

अन्वयार्थ – एतस्मिन् (इस नौ द्वारों वाले पुरे (नगर में) (निद्रा के समय) प्राण-अग्नय: (पंच-प्राण रूपी अग्नियाँ) एव (ही) (सर्वदा) जाग्रति (जागती रहती हैं)। ह वै (वस्तुत:) एष: (यह) अपान: (अपान) (ही) गार्हपत्य: (गार्हपत्य नामक अग्नि है), यत् (चूँकि) गार्हपत्यात् (गार्हपत्य अग्नि से) प्रणयनात् (अग्नि-ग्रहण की प्रक्रिया से) प्रणीयते (ग्रहण किया जाता है), (अत:) व्यान: (व्यान वायु) (ही) अन्वाहार्य-पचन: (दक्षिणाग्नि है), प्राण: (प्राण को) आहवनीय: (ग्रहण की गई अग्नि कहा जाता है)।।

भावार्थ – (नौ द्वारों वाले इस) देह-नगर में प्राण रूपी अग्नियाँ ही सर्वदा जागती रहती हैं। वस्तुत: यह अपान ही गार्हपत्य नामक अग्नि (के समान) है, चूँकि गार्हपत्य अग्नि (अपान) से ही, अग्नि-ग्रहण की प्रक्रिया से उसे ले जाया जाता है, अत: व्यान वायु ही दक्षिणाग्नि है, प्राण को ग्रहण की गई अग्नि कहा जाता है।।

भाष्य – सुप्तवत्सु श्रोत्रादिषु करणेषु एतस्मिन् पुरे नवद्वारे देहे प्राण-अग्नय: प्राणा: एव पञ्च वायव: अग्नय: इव अग्नय: जाग्रति। अग्नि-सामान्यम् हि आह – गार्हपत्य: ह वा एष: अपान:।

भाष्यार्थ – इस नौ द्वारोंवाले नगररूपी देह में, श्रोत्र आदि इन्द्रियों के सो जाने पर भी प्राण ही अग्नियाँ हैं – पंच-वायु-रूपी अग्नियाँ, अग्नि के समान जागती रहती हैं। (प्राणों की) अग्नि से तुलना करते हुए कहते हैं – गार्हपत्य अग्नि ही वह अपान वायु है।

भाष्य – कथम् इति आह – यस्माद्-गार्हपत्य-अग्ने: अग्निहोत्र-काले इतर: अग्नि: आहवनीय: प्रणीयते प्रणयनात् प्रणीयते अस्मात् इति प्रणयन: गार्हपत्य: अग्नि:।

भाष्यार्थ – कैसे (किस सादृश्य के कारण?) अब यह बताते हैं – चूँकि अग्निहोत्र के समय, गार्हपत्य अग्नि से (ही) दूसरी आहवनीय अग्नि को ले जाया जाता है। उसमें से ले जाया जाता है, अत: गार्हपत्य अग्नि को प्रणयन (ले जाया गया) कहते हैं।

भाष्य – तथा सुप्तस्य अपानवृत्ते: प्रणीयते इव प्राण: मुख-नासिकाभ्याम् संचरति अत: आहवनीय-स्थानीय: प्राण:। व्यान: तु हृदयात् दक्षिण-सुषिर-द्वारेण निर्गमात् दक्षिण-दिक्-सम्बन्धात् अन्वाहार्य-पचन: दक्षिणाग्नि:।।४/३।।

भाष्यार्थ – वैसे ही, प्राण मानो अपान-वृत्ति से निकलकर सोए हुए व्यक्ति के मुख-नासिका-द्वार से संचरण करता हुआ प्रतीत होता है, अत: प्राण की आहवनीय अग्नि के साथ तुलना की जा सकती है और व्यान, चूँकि हृदय के दक्षिणी द्वार से होकर निकलता है और दक्षिण दिशा से सम्बद्ध है, अत: इस (अग्नि को) अन्वाहार्य-पचन या दक्षिणाग्नि कहा जाता है। **(क्रमश:)**

आध्यात्मिक जिज्ञासा (८३)

स्वामी भूतेशानन्द

प्रश्न – महाराज ! अभी हमलोगों के संघ का विस्तार हो रहा है। बहुत से युवक सम्मिलित हो रहे हैं, इसलिए साधु-भाइयों की संख्या बहुत बढ़ गयी है। इसका परिणाम यह हो रहा है कि आप लोग जो वरिष्ठ हैं, वे प्रत्येक व्यक्ति पर पहले जैसे ध्यान नहीं दे पा रहे हैं। किन्तु पहले सभी क्षेत्रों में बहुत ध्यान दिया जाता था।

महाराज – नहीं, इतना मत बोलो। जितना कह रहे हो, उतना नहीं है। किन्तु जो लोग चाहते थे, उन पर दृष्टि रहती थी। जो लोग नहीं चाहते थे, वे लोग मस्त घूमते रहते थे।

– आप लोग जब संघ में आये थे और अभी जिस रूप में आप संघ को देख रहे हैं, उसमें क्या कोई परिवर्तन हुआ है?

महाराज – परिवर्तन कहना कठिन है। क्योंकि हमलोग इस धारा में डूब रहे हैं, इसलिये कितनी दूर गन्तव्य-स्थल है या कहाँ यात्रा प्रारम्भ है, यह कहना कठिन है। धारा में डूबते जा रहे हैं।

– महाराज ! जब आप आये थे, तब तो ठाकुर के कई पार्षद जीवित थे।

महाराज – अरे बापू ! ठाकुर जैसा दूसरा नहीं है। ठाकुर के सन्तानों के समान क्वचित् है। ठाकुर की सन्तानों को छोड़ देने पर, तो ऐसा ही होगा।

– थोड़ा जो कुछ परिवर्तन हुआ है, इस सम्बन्ध में आप क्या कहते हैं?

महाराज – परिवर्तन हुआ नहीं है, कहो कि परिवर्तन किया हूँ।

– नहीं महाराज ! आपने तो दोनों ही देखा है। अभी भी देख रहे हैं, तब भी देखे थे। आप कहिये न, क्या परिवर्तन हुआ है?

महाराज – एक परिवर्तन हुआ है। जप-ध्यान धीरे-धीरे गौण हो रहा है। बिल्कुल गौण हो गया है, नहीं कह रहा हूँ। धीरे-धीरे हो रहा है?

– और?

महाराज – दूसरा है, अभी नियम-कानून बढ़ रहा है। उस समय इतना नियम-कानून नहीं था। कई साधु लोग भी बाहर घूमते रहते थे। अभी बाहर घूमने पर उन्हें उत्तर देना पड़ता है। तब ऐसा नहीं करना पड़ता था।

– यह अच्छा है या बुरा है?

महाराज – इसका अच्छा-बुरा दोनों ही पक्ष हैं। जिस उद्देश्य के लिए आना हुआ, उस उद्देश्य के सम्बन्ध में उदासीन होना, यह बुरा है। इसके बाद ठाकुर की सन्तानों के जैसे ज्वलन्त अग्नि की ताप जिसके शरीर में लगी हो, वैसे भाग्यशाली कितने लोग हैं? हमलोगों को लगता है, हम सभी ईश्वर-प्राप्ति करके जायेंगे। अरे, ईश्वर-प्राप्ति के लिए जो प्रस्तुति चाहिए, वह हमलोगों को याद नहीं है। कितना कोड़ा मार खाकर चलेंगे? यही समस्या है। इसलिए संघर्ष अधिक हो रहा है। क्योंकि आदर्श के सम्बन्ध में सजगता कम हो गयी है। यही कठिनाई है। तब भी आदर्श था, आदर्श-जीवन सामने था। तब क्या सबने उस आदर्श में अनुप्राणित होकर उसी प्रकार अपने को निर्माण करने का प्रयास किया है? वैसा तो नहीं है। व्यक्ति एक ढंग से चला आ रहा है। **मनुष्याणां सहस्रेषु कश्चिद् यतति सिद्धये** – सिद्धि हेतु प्रयत्न करना, ये कदाचित् कभी कोई करता है, सभी नहीं करते। यह उसी प्रचीन काल की बात है। गीता की बात है। हमलोग अभी भी वही चाहते हैं। कहते हैं – तुमलोग जो कह रहे हो, नये सदस्यों की भर्ती सब कुछ देख-सुनकर, सोच-समझकर करना होगा। तो इतने शुकदेव हमलोग कहाँ पायेंगे !

– महाराज कई वृद्ध साधु बात-बात में कहते हैं – हमलोगों के समय बहुत अच्छा था। अब बहुत खराब हो गया है।

महाराज – वह कविता है न –

नदी के इस पार कहे छोड़ निःश्वास,
उस पार सभी सुख है मेरा विश्वास।

छोड़ दीर्घ श्वास नदी के उस पार,
कहता जो कुछ सुख है सभी उस पार।।

– इसका अर्थ है कि निराश होने योग्य कुछ नहीं हुआ। क्या यहाँ की अवस्था हताश होने जैसी है?

महाराज – हताश होने से तो हो ही गया। मर ही गया। हताश क्यों होगा? समझ रहे हो? नियमित समय से घंटा बज रहा है, भोजन कर ले रहे हैं, किसी के नहीं देखने पर सो रहे हैं, ऐसा होने से नहीं चलेगा, यह ठीक नहीं है। उस समय सभी अच्छे थे, ऐसा भी नहीं था। अभी सभी खराब है, ऐसा भी नहीं है। किन्तु दृष्टिकोण में थोड़ा भेद है। आचरण में थोड़ा भेद हुआ है। एक उदाहरण कहता हूँ – पहले बहुत से साधु लोग गृहस्थों के घर में रहते थे। उसे कोई बुरा नहीं मानता था। अभी वह सम्भव नहीं है। इस दृष्टि से देखो, तो एक व्यवस्था हुई है। संघ की जो धारा है, उसे दृढ़ करने का प्रयास हुआ है। किन्तु व्यक्तिगत जीवन में जो आध्यात्मिकता है, उस दृष्टि से बहुत कम हो गयी है। पूरी कम हो गयी है, ऐसा नहीं कहा जा सकता, किन्तु कुछ कम हुई है।

– स्वामीजी ने मठ की नियमावली में कहा है – विद्या-चर्चा कम होने से संघ-जीवन में अवनति हो जाती है। आप को क्या लगता है? यह विद्या-चर्चा भी कम हो गयी है क्या? आपने कहा कि शिक्षित लड़के आ रहे हैं, विद्वान लड़के आ रहे हैं।

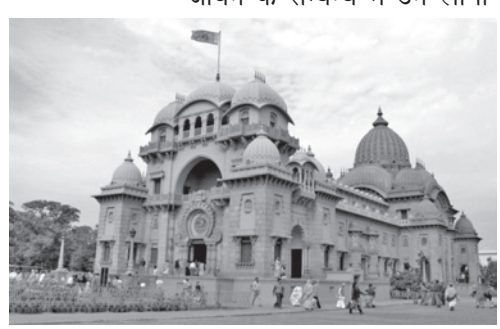

महाराज – विद्या-चर्चा कम हो गयी है। क्योंकि शास्त्र-पाठ की ओर दृष्टि, साधना के साथ जो घनिष्ठ सम्बन्ध है, वैसी विद्या-चर्चा कम हो गयी है। किन्तु पहले जैसे कोई पढ़ा, कोई नहीं पढ़ा। उस ओर कोई ध्यान नहीं देता था। अब वैसा नहीं है। विद्या का अर्थ केवल पढ़ना-लिखना ही तो नहीं है। विद्या माने शास्त्र-चर्चा, उसे भी करना होगा। उसके बाद ज्ञान बढ़ाना होगा। अध्यात्म विद्या का क्षेत्र प्रसारित करना होगा। स्वामीजी ने जो कहा है – विद्या का प्रसार, वह हमलोग कर रहे हैं। चेष्टा नहीं कर रहे हैं, ऐसा नहीं है। किन्तु एक संस्थान में लड़के परीक्षा में प्रतिभागी होते हैं, किन्तु उसमें से कितने सफल हुये, इस पर हमलोग अधिक बल देते हैं। किन्तु लड़कों की शिक्षा का सम्मान जिससे बढ़े, वह कम हो गया है। अर्थात् स्वीकृति कम है। यही बात है।

– दूसरी बात है महाराज, उस समय के मठ-मिशन की समस्याओं या काम-धाम की समस्याओं का समाधान ठाकुर के पार्षद जैसे करते थे, अभी वैसा सम्भव नहीं है।

महाराज – नहीं, सम्भव नहीं है। वैसा करने के लिये अतिरिक्त प्रयास भी नहीं करना चाहिए। जैसे कठोरता, तितिक्षा इसके ऊपर अधिक बल देना, अब नहीं चलेगा।

– तब आध्यात्मिक उन्नति कैसे होगी?

महाराज – अभी उसी तितिक्षा के भाव को प्राप्त कर आदर्श रूप में उसे पकड़कर रखना होगा। उससे कदाचित् थोड़ा प्रतिरोध होगा।

– फिर कई लोग कह रहे हैं – मिशन का कार्य समाज-सेवा, सामाजिक-विकासपरक है। हमलोग तो कहते हैं कि हमारा संघ आध्यात्मिक संगठन है। इसे लोगों को कैसे समझाया जाये कि यह केवल समाज-विकासपरक संस्था नहीं है?

महाराज – मान लो, बाह्य जगत के साथ हमलोगों का सम्बन्ध स्कूल, डिस्पेन्सरी, अस्पताल और व्याख्यान, इसी से होता है। इसलिये वे लोग इस दृष्टि से ही विचार करते हैं, इसी दृष्टि से सोचते-समझते हैं। किन्तु आध्यात्मिक जीवन के सम्बन्ध में उन लोगों का विचार अधिक नहीं है। अभी यदि कोई निष्ठा से जप-ध्यान करे, इसे ही मुख्य कार्य माने, तो उससे कितने लोग आकृष्ट होंगे? वास्तविक बात है, अच्छा साधु होना। साधुत्व को समाज के द्वारा अंगीकार किया जाना, सामाजिक जीवन में उसके प्रभाव का विस्तार करना, कदाचित् यह आशानुरूप नहीं हो रहा है।

– महाराज ! अभी तो तपस्या के लिये बहुत अधिक साधु नहीं जाते हैं, किन्तु बहुत-से लोग छुट्टी में जाते हैं।

महाराज – हाँ, बहुत से साधु छुट्टी में जाते हैं। वह भी बड़े जोर से तीन महीने की छुट्टी में जाते हैं, उससे कुछ नहीं होता। जीवन में तपस्या की एक धारा चाहिए। अत्यल्प समय में वैसा कोई छाप जीवन में नहीं पड़ता है।

– महाराज ! आपलोग तो कई प्रकार के लोगों से मिले हैं।

महाराज – मैं अपना उदाहरण दे रहा हूँ। मैं जब तपस्या करने गया था, तब किसी ने नहीं कहा था कि दो महीना के लिये या छह महीने के लिये या एक वर्ष के लिये। महापुरुष महाराज ने कह दिया था – तपस्या करो। उसके बाद आकर काम करना। 'उसके बाद' माने किसके बाद, यह नहीं कहा था। इसके फलस्वरूप दो वर्ष तक दो बार बाहर तपस्या किया हूँ। उस समय इसमें कोई बाधा नहीं हुई। किसी ने बाधा नहीं दिया।

महाराज – अभी कार्य बढ़ रहा है, कार्य का सम्मान कम हो रहा है।

महाराज – हमलोगों का कार्य के साथ-साथ आदर्श सम्बन्धी सजगता कम हुई है। बेलघरिया 'स्टुडेन्ट्स होम' के स्वामी निर्वेदानन्दजी कहते थे – हमलोग लड़कों का जीवन-निर्माण करना चाहते हैं। इसके लिए संख्या बहुत कम रखनी चाहिए। केवल २४ लड़कों की देखभाल हमलोग ठीक से कर सकते हैं। तब अन्य लोगों ने कहा कि संख्या और अधिक बढ़ानी होगी। ऐसा नहीं करने से दो बातें होगी – कई आवेदन कर रहे हैं और दूसरा है कि संघ का कार्य बहुत छोटा रहने से लोगों की दृष्टि उस ओर नहीं जाती है। इसीलिए संख्या बढ़ानी होगी। संख्या बढ़ाते-बढ़ाते अभी लगभग १०० छात्र हो गये हैं। उसका परिणाम यह हो रहा है कि लड़कों के साथ साधुओं का वैसा घनिष्ठ सम्बन्ध नहीं हो रहा है, जैसा पहले था। जिस उद्देश्य से संस्था की स्थापना हुई, उस उद्देश्य में बहुत क्षति हो गयी।

– और महाराज ! मिशन से दीक्षा लेने के सम्बन्ध में जो बात है। पहले बहुत कम लोग ही दीक्षा लेते थे, कदाचित् दीक्षा होती थी। अभी तो हजार-हजार...

महाराज – उसका कारण है, उस समय यहाँ से दीक्षा लेने में लोगों की बहुत रुचि नहीं थी। **(क्रमशः)**

पुस्तकें प्राप्त हुई

१. गीता संचयन, लेखक – प्रेमेशानन्द
अनुवादक – स्वामी विदेहात्मानन्द
पृष्ठ -१५६, मूल्य-५०/-
२. रामायण कथा, लेखक – स्वामी अमलानन्द
अनुवादक – स्वामी विदेहात्मानन्द
पृष्ठ -१०७, मूल्य -४०/-
३. महाभारत कथा, लेखक – स्वामी अमलानन्द
अनुवादक – स्वामी विदेहात्मानन्द
पृष्ठ-१३४, मूल्य-५५/-
४. हिन्दू धर्म की गतिशीलता, लेखक–भगिनी निवेदिता
अनुवादक – स्वामी विदेहात्मानन्द
पृष्ठ –६४, मूल्य – २०/-
५. मायावती अद्वैत आश्रम, पृष्ठ - २०, मूल्य-२०/-

प्राप्ति स्थान –
अद्वैत आश्रम, ५ डिही, एण्टाली रोड,
कोलकाता-७०००१४

कविता

विवेकानन्द वन्दना

रामकुमार गौड़, वाराणसी

रामकृष्ण के शिष्य विवेकानन्द अतुल बल-प्रतिभाशाली ।
उनका जीवन-चरित सुनो, वे सिंह-समान पराक्रमशाली ।।
बचपन से ही ध्यानसिद्ध, वे एकाग्रता-शक्ति अधिकाई ।
सदा जितेन्द्रिय, ओजस्वी मुखमण्डल की अति सुंदरताई ।।
तर्कबुद्धि में पारंगत, फिर सबल देह भी पर-उपकारी ।
गुरु से प्रथम मिलन में ही, ईश्वर-दर्शन व्याकुलता भारी ।।
परिव्राजक बनकर स्वदेश की उन्नति के अद्भुत व्रतधारी ।
राजा-रंक सभी को प्रेरित करते रहे स्वदेश-पुजारी ।।
अद्भुत प्रतिभा के बल पर ही, धर्म प्रचार किए अधिकाई।
सच्चरित्र-बल, पवित्रता से, हिन्दू धर्म-ध्वजा फहराई ।।
उठो, उठो, जागो मनुष्य तुम, वीर समान बनो, सुविचारी।
उनका बस उद्घोष यही, समझो चरित्र की महिमा न्यारी।।
मानव में दिव्यता छिपी है, उसे प्रकट कर लो हे भाई ।
उसके ही बल पर अपनी मानवता की हो सके भलाई ।।
हुई शिकागो धर्म-सभा जो, उसमें प्रतिनिधित्व किए जाई ।
सत्य-सनातन हिन्दू धर्म की, गौरव-वृद्धि किए अधिकाई ।।
रामकृष्ण के निर्मल-भावों के संवाहक, शुद्धाचारी ।
धर्म साधनामय सेवाव्रत के उन्नायक, शक्ति-पुजारी ।।

गीतातत्त्व-चिन्तन (९)

ग्यारहवाँ अध्याय

स्वामी आत्मानन्द

(ब्रह्मलीन स्वामी आत्मानन्द जी महाराज रामकृष्ण मिशन विवेकानन्द आश्रम, रायपुर के संस्थापक सचिव थे। उनका 'गीतातत्त्व-चिन्तन' भाग-१ और २, अध्याय १ से ६वें तक पुस्तकाकार प्रकाशित हो चुका है और लोकप्रिय है। ८वाँ अध्याय 'विवेक ज्योति' के सितम्बर, २०१६ से नवम्बर, २०१७ अंक तक प्रकाशित हुआ था। अब प्रस्तुत है ११वाँ अध्याय, जिसका सम्पादन ब्रह्मलीन स्वामी निखिलात्मानन्द जी ने किया है। – सं.)

भय से व्यथित अर्जुन

रूपं महत्ते बहुवक्त्रनेत्रं
महाबाहो बहुबाहूरुपादम्।
बहूदरं बहुदंष्ट्राकरालं
दृष्ट्वा लोकाः प्रव्यथितास्तथाहम्।।२३।।
नभःस्पृशं दीप्तमनेकवर्णं
व्यात्ताननं दीप्तविशालनेत्रम्।
दृष्ट्वा हि त्वां प्रव्यथितान्तरात्मा
धृतिं न विन्दामि शमं च विष्णो।।२४।।
दंष्ट्राकरालानि च ते मुखानि
दृष्ट्वैव कालानलसन्निभानि।
दिशो न जाने न लभे च शर्म
प्रसीद देवेश जगन्निवास।।२५।।

महाबाहो (हे महाबाहो !) ते बहुवक्त्रनेत्रम् बहुबाहूरूपादम् (आपके अनेक मुख और नेत्र, अनेक हाथ, जंघा, पैर) बहूदरम् बहुदंष्ट्रा (उदर और अनेक दाढों के कारण) करालम् महत् रूपम् दृष्ट्वा (विकराल रूप को देखकर) लोकाः प्रव्यथिताः तथा अहम् (सब लोग तथा मैं भी व्याकुल हो रहा हूँ) विष्णो (हे विष्णो!) नभःस्पृशम् दीप्तम् अनेकवर्णम् (नभस्पर्शी दीप्त अनेक वर्णवाले) व्यात्ताननम् दीप्तविशालनेत्रम् (फैले मुखवाले, प्रकाशित विशाल नेत्रोंवाले) त्वाम् दृष्ट्वा प्रव्यथितान्तरात्मा (आपको देखकर भयभीत हो) धृतिम् च शमम् न विन्दामि (मैं धीरज और शान्ति से रहित हो गया हूँ) देवेश जगन्निवास (हे देवेश ! हे जगन्निवास!) दंष्ट्राकरालानि च कालानल सन्निभानि (विकराल दाढ़ोंवाले और प्रलयाग्नि समान) ते मुखानि दृष्ट्वा (आपके मुखों को देखकर) दिशः न जाने च शर्म एव न लभे (मैं दिग्भ्रमित और सुखरहित हो गया हूँ) प्रसीद (आप प्रसन्न हों)।

''हे महाबाहो ! आपके अनेक मुख और नेत्र, अनेक हाथ, जंघा, पैर, उदर और अनेक दाढ़ों के कारण विकराल रूप को देखकर सब लोग तथा मैं भी व्याकुल हो रहा हूँ।''

''हे विष्णो ! नभस्पर्शी दीप्त अनेक वर्णवाले, फैले मुखवाले, प्रकाशित विशाल नेत्रोंवाले आपको देखकर भयभीत हो मैं धीरज और शान्ति से रहित हो गया हूँ।''

''हे देवेश ! हे जगन्निवास ! विकराल दाढ़ोंवाले और प्रलयाग्नि समान आपके मुखों को देखकर मैं दिग्भ्रमित और सुखरहित हो गया हूँ, आप प्रसन्न हों।''

बहुत से चेहरे, आँखों, पैरों, जंघाओं, उदरोंवाले आपके महान रूप को मैं और अन्य सब देख रहे हैं। अनेक आँखें कहने का तात्पर्य है कि भगवान की दृष्टि सब जगह रहती है। उनकी दृष्टि से कोई अपने को बचा नहीं सकता। अनन्त भुजाएँ हैं, अर्थात् सब जगह सबको पकड़ सकते हैं। जंघा और पैर बहुत होने से सब जगह दौड़कर चले जाते हैं। दौड़कर पकड़ेंगे, सब अनेक कराल दाँतों से चबाकर अपने अनेक उदरों में डाल लेंगे। आपका यह रूप उस द्युलोक से भी ऊपरवाले आकाश का स्पर्श कर रहा है। अत्यन्त द्युतिमान है। उसके बहुत-से वर्ण हैं। आपका मुँह फैला हुआ है कि सब उसमें से होकर आपके उदर में समाते जाएँ। आपके नेत्र विशाल हैं और प्रज्जवलित हैं। हे प्रभो ! आपके इस रूप को

देखकर मेरी अन्तरात्मा व्यथित हो रही है। यहाँ अन्तरात्मा का अर्थ है मन। क्योंकि ऐसे तो अन्तरात्मा भगवान हैं। भगवान को देखकर भगवान कैसे व्यथित हो सकते हैं? परिणामस्वरूप मेरा धीरज छूट गया है। शान्ति भी मुझे नहीं मिल रही है। मैं अधीर हो गया हूँ, अशान्त हो गया हूँ। आपके मुख में कालरूपी अग्नि जैसी कराल दाढ़ें देखकर मुझे दिशाओं का भी ज्ञान नहीं रहा। अर्थात् मेरी मति मारी गयी है। मुझे कुछ सूझ नहीं मिल रहा है। आपके इस रूप को देखकर मुझे सुख नहीं मिल रहा है। अर्जुन ने कल्पना तो यह की थी कि भगवान के दिव्यरूप को देखकर उसे अप्रतिम आनन्द मिलेगा। भगवान के दिव्यरूप में आनन्द तो है ही, पर भगवान कभी-कभी ऐसा दिव्यरूप भी धारण करते हैं, जिसमें आनन्द नहीं रहता। उसमें तो फिर दुख ही दुख, घबराहट ही घबराहट और भय ही भय दिखाई देते हैं। भगवान के इस रूप को देखकर अर्जुन को सुख नहीं मिल रहा है, इसीलिए वह कह रहा है – हे देवेश ! हे जगन्निवास ! जगत् के आधार ! हे जगदाश्रय ! आप मुझ पर कृपा कीजिए !

पाण्डवों की विजय का संकेत

अमी च त्वां धृतराष्ट्रस्य पुत्राः
सर्वे सहैवावनिपालसङ्घैः।
सूतपुत्रस्तथासौ
सहास्मदीयैरपि योधमुख्यैः।।२६।।
वक्त्राणि ते त्वरमाणा विशन्ति
दंष्ट्राकरालानि भयानकानि।
केचिद्विलग्ना दशनान्तरेषु
सन्दृश्यन्ते चूर्णितरुत्तमाङ्गैः।।२७।।

अमी सर्वे एव धृतराष्ट्रस्य पुत्राः (वे सभी धृतराष्ट के पुत्र) अवनिपालसङ्घैः सह (अन्य कौरव राजाओं के साथ) च भीष्मः द्रोणः तथा असौ सूतपुत्रः (भीष्मपितामह, द्रोणाचार्य तथा कर्ण) अस्मदीयैः अपि योधमुख्यैः सह (और हमारे पक्ष के भी प्रधान योद्धागण) ते दंष्ट्राकरालानि भयानकानि वक्त्राणि (आपके विकराल दाढ़ोंवाले भयानक मुखों में) त्वरमाणाः विशन्ति (वेग से प्रवेश कर रहे हैं) केचित् चूर्णितैः उत्तमाङ्गैः (और कई सारे चूर्ण सिरोंवाले) त्वाम् दशनान्तरेषु विलग्नाः सन्दृश्यन्ते (आपके दाँतों के बीच में चिपके हुए दिख रहे हैं)।

''वे सभी धृतराष्ट्र के पुत्र अन्य (कौरव) राजाओं के साथ, भीष्मपितामह, द्रोणाचार्य तथा कर्ण और हमारे पक्ष के भी प्रधान योद्धागण आपके विकराल दाढ़ोंवाले भयानक मुखों में वेग से प्रवेश कर रहे हैं और कई सारे चूर्ण सिरोंवाले (योद्धागण) आपके दाँतों के बीच में चिपके हुए दिख रहे हैं।''

अर्जुन की एक जिज्ञासा भी थी कि महाभारत-युद्ध में कौरव जीतेंगे या पाण्डव? उसके उस प्रश्न के उत्तर में भगवान अर्जुन को अपने भीतर प्रवेश करके दिखाते हैं। कौरवों की सेनाओं के सभी योद्धागण प्रभु के मुख में प्रवेश करते दिखाई देते हैं। भीष्म, द्रोण, कर्ण, जिनसे अर्जुन को डर लगता था, वे भी भगवान के मुँह में प्रवेश कर रहे हैं। अपनी पाण्डव सेना को भी भगवान के भीतर जाते वह देखता है। मुख्य-मुख्य योद्धा धृष्टद्युम्न आदि भी उसमें प्रवेश करते दिखाई दिये। अर्जुन देखता है कि ये सब तीव्रगति से जाकर भगवान के मुँह में प्रवेश कर रहे हैं। कोई-कोई भगवान की विकराल दाढ़ों के बीच में जाकर चिपके जा रहे हैं। कोई-कोई चूर्ण हुए जा रहे हैं। माँस के लोथड़े दिख रहे हैं। बहता हुआ रुधिर दिखता है। अत्यन्त भयानक दृश्य है। दोनों सेनाओं के योद्धाओं को भगवान के शरीर में वह नष्ट होते देख रहा है। उसे यह अनुमान भी हो रहा है कि युद्ध में जीत पाण्डवों की ही होगी। भीष्म, द्रोणाचार्य, कर्ण, धृतराष्ट्र के सब पुत्र, सभी मारे जा रहे हैं। पाण्डवों में से किसी को भी अर्जुन ने मरते नहीं देखा। इसलिए आश्वस्त भी हुआ कि भगवान की कृपा से सब पाण्डव सुरक्षित हैं। इससे संकेत मिल गया कि विजय पाण्डवों की ही होगी। अर्जुन ने सबको भगवान के जलते हुए मुख में जिस तीव्र गति से प्रवेश करते देखा था, उस गति की उपमा देते हुए कहता है – ऐसा लग रहा है मानो बहुत-से जल के प्रवाहवाली नदियाँ समुद्र की ओर भागी जा रही हैं। जैसे पतिंगे अपने नाश के लिए जलते हुए दीपक की ओर दौड़ते हैं, उसी प्रकार ये योद्धा भी अपना नाश कराने के लिए आपके मुख में तेजी से प्रवेश कर रहे हैं। **(क्रमशः)**

इष्ट चिन्तन और ध्यान करने के पहले ऐसा सोचा करता था मानो मन को अच्छी तरह से धो ले रहा हूँ; मन के भीतर कुचिन्ता, वासना आदि जो कुछ मैल या गन्दगी है, वह सब अच्छी तरह धोकर मन को स्वच्छ कर लेने के बाद उसमें इष्टदेव को लाकर बिठा रहा हूँ। ऐसा किया करो। – श्रीरामकृष्ण देव

रामराज्य का स्वरूप (७/३)

पं. रामकिंकर उपाध्याय

(पं रामकिंकर महाराज श्रीरामचरितमानस के अप्रतिम विलक्षण व्याख्याकार थे। रामचरितमानस में रस है, इसे सभी जानते हैं और कहते हैं, किन्तु रामचरितमानस में रहस्य है, इसके उद्घाटक 'युगतुलसी' की उपाधि से विभूषित श्रीरामकिंकर जी महाराज थे। उन्होंने यह प्रवचन रामकृष्ण मिशन विवेकानन्द आश्रम, रायपुर के पावन प्रांगण में १९८९ में विवेकानन्द जयन्ती के उपलक्ष्य में दिया था। 'विवेक-ज्योति' हेतु इसका टेप से अनुलेखन स्वर्गीय श्री राजेन्द्र तिवारी जी और सम्पादन स्वामी प्रपत्त्यानन्द जी ने किया है। – सं.)

क्रियापरायण शरीर-प्रमुख कैकेयीजी को क्या उसे देना चाहिए? प्रभु ने कहा कि कुपथ्य हो, तब तो नहीं देना चाहिए। भरतजी ने कहा, प्रभु ! यह 'माँ' शब्द है तो बड़ा प्रिय शब्द, लेकिन कैकेयीजी के लिये कुपथ्य है। क्यों? बोले, मुझे बेटा मानकर ही तो उन्होंने सारा अनर्थ किया। मैं डरता हूँ कि मैं उन्हें फिर से माँ कहूँ और फिर से उनका मातृत्व उदय हो जाये और फिर से किसी अनर्थ की योजना बनने लगे, इससे अच्छा यही होगा कि मैं उनको माँ कहकर पुकारूँ ही नहीं। मानो श्रीभरत कैकेयीजी को देहभावना से ऊपर उठाना चाहते हैं, देहभावना से ऊपर करना चाहते हैं। उनका अभिप्राय है कि अगर तुम मुझे देह के नाते से स्वीकार करती रहोगी, तो वास्तविक नाते से वंचित रहोगी। पर श्रीभरत के भाषण की विशेषता यह थी कि उन्होंने कैकेयीजी को तो देह-भावना से ऊपर उठाने की चेष्टा की ही, उन्होंने सारे अयोध्यावासियों को, सबको देह-भावना से ऊपर उठा दिया।

अगर आप देखेंगे, तो पायेंगे कि श्रीभरतजी की जो चित्रकूट यात्रा है, उस यात्रा में जो श्रीभरत का दर्शन करता है, जो उनका भाषण सुनता है, वह देहवृत्ति से ऊपर उठे बिना नहीं रहता। इस प्रसंग की विशेषता यहाँ से प्रारम्भ होती है। अयोध्यावासियों के सन्दर्भ में गोस्वामीजी ने कहा, जब श्रीभरत बोलने के लिये खड़े हुए, तो उनकी आँखों से आँसुओं की धारा प्रवाहित होने लगी, उस समय श्रीभरत की दशा क्या हुई –

सानी सरल रस मातु बानी सुनि भरतु ब्याकुल भए।
लोचन सरोरुह स्रवत सींचत बिरह उर अंकुर नए।।
सो दसा देखत समय तेहि बिसरी सबहि सुधि देह की।
तुलसी सराहत सकल सादर सीवँ सहज सनेह की।।
२/१७५/छंद

गोस्वामीजी ने कहा कि किसी को भी रंचमात्र देह का भान नहीं रहा। प्रत्येक व्यक्ति शरीर से ऊपर उठ गया। यहाँ तक कि गुरु वशिष्ठ भी उनसे इतने प्रभावित हुए कि कुछ समय के लिए सुध-बुध खो बैठे। किसी ने पूछ दिया कि जब आप यह दावा करते हैं कि सभी लोग शरीर से ऊपर उठ गये, तो ऐसी स्थिति में कर्तव्य कर्म का निर्वाह कैसे हुआ? कर्तव्य कर्म तो शरीर से जुड़ा हुआ है। ऐसी स्थिति में श्रीभरत का भाषण सुनकर लोग डूबे कि पार हुए? गोस्वामीजी ने बहुत बढ़िया बात कही। डूबना महत्त्वपूर्ण है कि पार होना महत्त्वपूर्ण है। अगर कोई डूब जाये, तो उसको बुद्धिमान नहीं कहेंगे और अगर कोई पार हो जाय, तो उसे तैराक कहेंगे। पर गोस्वामीजी ने यहाँ पर एक वाक्य कहा, उन्होंने कहा कि अन्य सरिताओं – विचार की सरिता को, धर्म की सरिता को पार कर लेना बुद्धिमत्ता का लक्षण है। ऐसी स्थिति में अगर कोई व्यक्ति धर्म के समुद्र को, विचार के समुद्र को पार कर ले, तो उसे महान विचारक और महान धर्मात्मा कहेंगे। लेकिन यह समुद्र नहीं, प्रेम की नदी है –

तुलसी न समरथु कोउ जो तरि सकै सरित सनेह की।।
२/२७५/छंद

कोई ऐसा व्यक्ति नहीं है, जो प्रेम की सरिता को पार कर सके। इसलिए श्रीभरत के भाषण की विशेषता यह थी कि गुरु वशिष्ठ के भाषण में जहाँ बौद्धिक विकास था, विद्वत्ता परिलक्षित हो रही थी, वहाँ श्रीभरत के भाषण ने सबको प्रेमरस में सराबोर कर दिया। प्रेमरस में डुबो दिया। **अनबूड़े बूड़े, तरे जे बूड़े सब अंग** – गोस्वामीजी ने कहा कि कई जगह जहाँ पर डूब जानेवाला पार हो जाता है, यह उसी भरत

के भाषण की विशेषता थी। पहले तो उनके प्रेम का प्रवाह इस यात्रा में आगे चलकर मिलेगा, निषाद ने जिस समय श्रीभरत का दर्शन किया, तो निषाद पर क्या प्रभाव पड़ा।

देखि भरत कर सील सनेहू।
भा निषाद तेहि समय बिदेहू।। २/१९४/२

श्रीभरत का शील और प्रेम देखकर निषाद के मन में देहभाव जो भी शेष था, वह दूर हो गया। श्रीभरत ने अपने प्रेम के प्रभाव से, प्रेम की सरिता में अयोध्यावासियों को डुबो दिया।

वह तो बड़ा मीठा प्रसंग आता है। जब भगवान राम ने गंगा के किनारे खड़े होकर केवट से कहा, नाव ले आओ और केवट को जब आदेश मिला, तो गंगाजी बड़ी प्रसन्न हुईं। उन्होंने सोचा केवट का भाग्य खुल गया। प्रभु स्वयं खड़े हैं, नाव माँग रहे हैं। ऐसी दुर्लभ सेवा का अवसर मिला, इससे बढ़कर इसके भाग्य की बात क्या होगी? लेकिन उस केवट ने कहा, मैं नाव नहीं लाऊँगा। आपको यदि पार उतरना है, तो आपको पहले चरण धुलाना होगा। आपका चरण मैं तब धोऊँगा, जब आप स्वयं कहेंगे कि मेरा चरण धो लो। तब मैं आपका चरण धोकर आपको पार उतार दूँगा। केवट को जब यह कहते हुए गंगाजी ने सुना, तो कहा कि केवट बड़ा अभागा है। इसका सौभाग्य आकर भी लौट गया। गंगाजी को याद आ गयी कि ये प्रभु कौन हैं। गंगा का तो प्राकट्य ही तब हुआ था, जब भगवान बलि की यज्ञशाला में वामन से विराट हुए थे और सारे ब्रह्माण्ड को उन्होंने दो पग में नाप लिया था। अब केवट उन्हें नाव देने के लिए तैयार नहीं है, तो क्या मेरी छोटी-सी धारा को लांघ जाने में उन्हें कोई कठिनाई होगी। अभी अपना विराट रूप प्रगट करेंगे और मुझे लाँघकर पार चले जायेंगे और केवट देखता ही रह जाएगा। इसलिए केवट तो आए हुए सौभाग्य को गवाँ बैठा। पर बाद में यह देखकर गंगाजी को आश्चर्य हुआ कि भगवान राम जैसे केवट का मान-मनौवल करने लगे –

कृपासिंधु बोले मुसुकाई।
सोई करु जेहिं तव नाव न जाई।।
बेगि आनु जल पाय पखारू।
होत बिलंबु उतारहि पारू।। २/१००/१-२

श्रीराम ने कहा कि जल्दी से जल्दी आकर मुझे पार उतार दो, बड़ा विलम्ब हो रहा है।

पद नख निरखि देवसरि हरषी।
सुनि प्रभु बचन मोहँ मति करषी।। २/१००/५

प्रभु की वाणी को सुनकर गंगाजी की बुद्धि को मोह ने आकृष्ट कर लिया। क्या? सोचने लगीं – कहीं मैं पहचानने में तो भूल नहीं कर रही हूँ? कहीं यह कोई मनुष्य तो नहीं है? क्योंकि कोई मनुष्य ही इतनी बाध्यता केवट से प्रगट करेगा। यह क्या हो गया? इनके चरणों के नख तो लग रहे हैं कि ये हमारे प्रभु के ही हैं, पर इनके वाक्यों से तो बिल्कुल विपरीत प्रतीति हो रही है। प्रभु ने मुस्करा कर गंगाजी की ओर देखा और कहा गंगा, तब मैं कोई ब्रह्माण्ड को थोड़े ही नाप रहा था, मैं तो बलि के अभिमान को नाप रहा था। बलि के अभिमान को नापना सरल है, पर प्रेमी के प्रेम को नापना मेरे बस में नहीं है। यहाँ केवट जो बोल रहा है, उसमें उसका अभिमान नहीं है। इसमें उसकी प्रीति है और ऐसी स्थिति में तो मैं यही चाहूँगा कि केवट की इस प्रेम-सरिता को मैं पार न कर सकूँ और अपने आप को केवट के हाथ में सौप दूँ। यह है प्रेम की महिमा।

श्रीभरत के प्रेमरस की महिमा यही है। भावुकता और प्रेम के साथ व्यावहारिक सन्दर्भ में जो भूमिका आई है, श्रीभरत के चरित्र में वह सामंजस्य आपको मिलेगा। यह एक तरह से भाषण की पराकाष्ठा की सीमा थी, पर उसके बाद गोस्वामीजी ने कहा कि श्रीभरतजी के आँसुओं के माध्यम से जो भाषण हुआ, वह तो विदेह बना देनेवाला था ही, लेकिन धर्म के सन्दर्भ में जब श्रीभरत बोले, तब उन्होंने वाणी का प्रयोग किया और वाणी के द्वारा भी उनका जो भाषण था, वह सचमुच अद्‌भुत भाषण था। श्रीभरत बोलने के लिए खड़े हुए, उसके लिए गोस्वामीजी ने लिखा – **भरत कमल कर जोरि।** सबसे पहले तो उन्होंने सारी सभा को प्रणाम किया। तब गोस्वामीजी ने एक नाम दिया। क्या? वे कह सकते थे कि प्रेमियों में प्रेमशिरोमणि श्रीभरत बोले। पर उन्होंने उस समय वह बात नहीं कही। भरत भक्तों के, प्रेमियों के शिरोमणि हैं, यह बात तो रामायण में बार-बार कही गई, पर यहाँ पर गोस्वामीजी ने उन्हें प्रेमी और भक्त की उपाधि न देकर कौन सी उपाधि दी? बोले –

भरतु कमल कर जोरि धीर धुरन्धर धीर धरि।

इसका अभिप्राय है कि श्रीभरत ने जो उत्तर दिया, वह केवल प्रेम और भावना की ही दृष्टि से नहीं था। उसे अगर

धर्म की कसौटी पर भी कसकर देखें, तो श्रीभरतजी ने जो उत्तर दिया, वह कसौटी पर खरा उतरता है। श्रीभरत कौन हैं? धर्म की व्याख्या में कहा गया – **धारणात् धर्म इत्याहुः।** जिसके आधार पर समाज टिका हुआ है, वह धर्म है। लेकिन गोस्वामीजी ने कहा कि भरत, समाज तो टिका हुआ है धर्म के आधार पर, लेकिन धर्म किसके आधार पर टिका हुआ है? धर्म कोई साकार वस्तु तो नहीं है। धर्म तो शब्दों के द्वारा कहे गये कुछ वाक्य हैं। ऐसी स्थिति में समाज को धारण करने वाला धर्म है, पर धर्म को धारण करने वाला कौन है? इस बात का संकेत महाभारत में आता है। यदि धर्म को हम समाज का नियामक मानें, तो ठीक है, लेकिन यक्ष और युधिष्ठिर का संवाद आपने सुना होगा। जब पाँचों पाण्डव जल के अभाव में प्यास से मरने लगे, उस समय जल लेने के लिए एक-एक भाई जाता है और सरोवर में जाकर जल पीने की चेष्टा करता है। उस सरोवर के किनारे एक यक्ष खड़ा है। उसने सावधान किया कि अगर मेरे प्रश्न का उत्तर दिये बिना जल पीयेगा, तो निश्चित रूप से तुम्हारी मृत्यु हो जायेगी। पर प्रत्येक भाई इतना प्यासा था कि उसने यक्ष के प्रश्न का उत्तर दिये बिना ही जल पीने की चेष्टा की और उसकी मृत्यु हो गई। इस प्रकार से चारों भाई मृत्यु के ग्रास बने हुए पड़े थे। तब अन्त में युधिष्ठर आते हैं। युधिष्ठिर में धर्म और विवेक की प्रधानता है। यक्ष ने युधिष्ठिर से कहा कि मुझे विश्वास है कि तुम्हारे चारों भाइयों ने जो भूल की है, वह भूल तुम नहीं दुहराओगे और मेरे प्रश्नों का उत्तर दिए बिना जल नहीं पियोगे। उस समय यक्ष ने युधिष्ठिर से चार प्रश्न किए – **कः वार्ता, किमाश्चर्यम्, को पन्थः, किमाश्चर्यन्ते।** उसमें एक प्रश्न था – मार्ग क्या है? शास्त्रों में मार्गों का वर्णन किया गया है। ग्रन्थों में विविध मार्गों का वर्णन किया गया है, पर युधिष्ठिर, जो धर्मराज माने जाते हैं, उन्होंने जो सूत्र दिया, वह बड़े महत्त्व का है। याद रखिएगा, समाज टिका हुआ है, धर्म के आधार पर और धर्म स्वयं टिका हुआ है, युधिष्ठिर कहते हैं, क्या करें वेद चार हैं, पुराण अठारह हैं, स्मृतियाँ अठारह हैं, उनके अर्थों में भिन्नता है। ऐसी स्थिति में यदि हम निर्णय भी करना चाहें, तो हम उन अलग-अलग ग्रन्थों में, अलग-अलग बातें पढ़कर कभी-कभी और भी अधिक भ्रमित हो जाते हैं कि उनमें से हम किसे स्वीकार करें और किसे अस्वीकार करें !

युधिष्ठिर जी ने कः पन्थः का उत्तर देते हुए कहा, जो उत्तर बड़ा महत्त्वपूर्ण है –

तर्कोऽप्रतिष्ठः श्रुतयो विभिन्ना
नैको ऋषिर्यस्य मतं प्रमाणम्।
धर्मस्य तत्त्वं निहितं गुहायां
महाजनो येन गतः स पन्थाः।।

धर्म का रहस्य अत्यन्त अन्तराल में छिपा हुआ है और इसलिए व्यक्ति का कर्तव्य क्या है? बोले –

समाज को धारण करता है धर्म, पर धर्म को धारण करने का कार्य महापुरुष करते हैं, यह सन्त पुरुषों का कार्य है। सन्तों के द्वारा ही शास्त्र की सच्ची व्याख्या प्राप्त होती है, उसका परिचय प्राप्त होता है। इसलिए युधिष्ठिर कहते हैं –

धर्मस्य तत्त्वं निहितं गुहायां
महाजनो येन गतः स पन्थाः।।

ये महाजन कौन हैं? किसको महाजन मानें? जो धर्म को धारण करे, जो उसके रहस्य को प्रगट करे। गोस्वामीजी ने वह उपलब्धि श्रीभरतजी को दी। उन्होंने कहा –

भरतु कमल कर जोरि धीर धुरन्धर धीर धरि।

धर्म के धुरा को धारण करनेवाला अगर कोई है, तो श्रीभरत जैसा संत महापुरुष है और वह धर्म धुरंधर श्रीभरत हाथ जोड़कर खड़े हुए। भरतजी के भाषण की विशेषता गोस्वामीजी ने बताई–

बचन अमिअँ जनु बोरि देत उचित उत्तर सबहि।।
२/१७६

श्रीभरत ने जो भाषण दिया, वह कठोर था कि कोमल था? बोले शब्दावली इतनी कोमल, सचमुच इतनी विनम्रता से उन्होंने भाषण दिया कि लगता है कि इसमें कोमलता की पराकाष्ठा है। पर भरत ने जो भाषण दिया, उसमें उन्होंने जिस दृढ़ता से गुरु वशिष्ठ की, मन्त्रियों की, कौशल्या माता की, समाज की, महाराज श्रीदशरथ की मान्यताओं का जो खण्डन किया, वह अपने आप में अद्‌भुत है। **(क्रमशः)**

जब तक नीचे आग है, तभी तक दूध उफनकर ऊपर उठता है, आग को हटा लेने पर वह फिर ज्यों का त्यों हो जाता है। साधना-अवस्था में भी जब तक साधना की अग्नि जलती रहती है, तभी तक मन ऊर्ध्वगामी रहता है।

– श्रीरामकृष्ण देव

साधुओं के पावन प्रसंग (४७)

स्वामी स्वप्रकाशानन्द

स्वामी चेतनानन्द

(स्वामी चेतनानन्द जी महाराज से रामकृष्ण संघ के भक्त भलीभाँति परिचित हैं। वर्तमान में महाराज वेदान्त सोसायटी, सेंट लुइस के मिनिस्टर-इन-चार्ज हैं। उन्होंने श्रीरामकृष्ण, श्रीमाँ सारदा, स्वामी विवेकानन्द और वेदान्त पर अनेक पुस्तकें लिखी और अनुवाद की हैं। प्रस्तुत पुस्तक में रामकृष्ण संघ के महान त्यागी संन्यासियों के संस्मरण हैं, जिनके सम्पर्क में लेखक स्वयं आए थे। 'विवेक ज्योति' के पाठकों हेतु मूल बंगला से इसका हिन्दी अनुवाद धारावाहिक रूप से दिया जा रहा है। – सं.)

स्वामी स्वप्रकाशानन्द (१८९०-१९८३) या तपस्वी सुरेन महाराज का मैंने काशी सेवाश्रम के १० नम्बर वार्ड में २ अक्तूबर, १९७७ ई. को दर्शन किया था। वे स्वामी ब्रह्मानन्द जी महाराज के शिष्य थे तथा उन्होंने जीवन का अधिकांश समय तपस्या और शास्त्र-अध्ययन में व्यतीत किया है। देखा कि शरीर दुर्बल, किन्तु मुँह पर हँसी है।

स्वामी स्वप्रकाशानन्द

मैंने सुरेन महाराज से कई प्रश्न किये, उन्होंने उसका उत्तर दिया था।

प्रश्न – राजा महाराज साधन-भजन के सम्बन्ध में क्या कहते थे?

उत्तर – महाराज कहते थे, 'जप करते रहो। जप करने से ही सब होगा।'

प्रश्न – कौन जप श्रेष्ठ है – मानस या उपांशु (केवल ओंठ हिलता है।)

उत्तर – मानस जप पहले-पहल नहीं होता। उपांशु अच्छा है। बाद में अभ्यास करते-करते मानस-जप होता है।

प्रश्न – जप में आस्वादन कैसे प्राप्त किया जाये?

उत्तर – अभ्यास करना होता है। इष्ट से आसक्ति होने पर आस्वादन होता है। आन्तरिकता से जप करना होता है। जप-ध्यान कभी भी नहीं छोड़ना चाहिए।

प्रश्न – अभी आप जप कैसे करते है?

उत्तर – मानस जप करता हूँ।

प्रश्न – आपको स्मरण-मनन है?

उत्तर – हाँ, अधिकांश समय स्मरण रहता है। कुछ समय के लिए शारीरिक अस्वस्थता के कारण भूल जाता हूँ।

प्रश्न – आपने हरि महाराज का बहुत सत्संग किया है। उनकी बातें कुछ कहिए।

उत्तर – वे आध्यात्मिक जगत् में निमग्न रहते थे। जप-ध्यान करने के लिए कहते। जप-ध्यान नहीं करने से वृद्धावस्था में क्या लेकर रहोगे? सुनो, तुमको एक घटना बताता हूँ। एक दिन सन्ध्या समय हरि महाराज के साथ कनखल से ब्रह्मकुण्ड घूमने गया। रास्ते में एक दुकान पर जलेबी बन रही थी। महाराज वह देखकर खड़े हो गये और जोर से कहा, "सुरेन, जलेबी हमारा आदर्श है, जलेबी हमारा आदर्श है। देखो, यह मनुष्य जलेबी घी में छानकर शक्कर के रस में डाल रहा है। हमारा लक्ष्य ज्ञानमिश्रित-भक्ति है। हमें मन को ज्ञान-वैराग्य से छानकर भक्तिरस में डुबाना होगा। ठाकुर ने इसे अपने जीवन में पालन करके दिखाया है।'

यह सब पुराने तपस्वी संन्यासी रामकृष्ण संघ के आध्यात्मिक भावधारा को पकड़ कर रखे थे। वे सब संन्यासी अब हमारे बीच नहीं हैं। इसीलिए उनलोगों की स्मृति का स्मरण करना हमारे लिए मूल्यवान सम्पत्ति है। स्वामी पवित्रानन्द स्वामी ब्रह्मानन्द जी महाराज के शिष्य थे। उन्होंने सुरेन महाराज से जानना चाहा कि कैसे उनकी दीक्षा हुई थी। इसके उत्तर में सुरेन महाराज ने लिखा :

ॐ

रामकृष्ण आश्रम
किशनपुर, पोस्ट - राजपुर,
जिला - देहरादून, यू.पी.
६ मई, १९६८

प्रिय पवित्रानन्दजी,

... आप जिस विषय में जानना चाहते हैं, उस विषय में कुछ लिख रहा हूँ। जिस दिन मेरी दीक्षा हुई, उस दिन हम

दो दीक्षार्थी थे। मैं और एक अन्य संन्यासी। पुराने ठाकुर मन्दिर के बगल वाले ध्यान-कक्ष में हमारी दीक्षा हुई। उन दिनों महाराज बेलूड़ मठ में इस ध्यान-कक्ष में ही दीक्षा देते थे। दीक्षा देने के पूर्व महाराज आधा घण्टा तक पूजा करते थे। हमारे समय भी महाराज ने ध्यान-कक्ष में प्रवेश करके आधा घण्टा तक पूजा की। हम दोनों ध्यान-कक्ष के बाहर द्वार के सामने प्रतीक्षा कर रहे थे। पूजा समाप्त होने पर महाराज ने संन्यासी को पहले बुलाया। संन्यासी दीक्षा ग्रहण करके कुछ समय पश्चात् बाहर आ गये। बाद में मेरा नाम लेकर मुझे बुलाया। मेरे प्रवेश करते ही मुझे निर्दिष्ट आसन पर बैठने के लिए संकेत किया। मैं प्रणाम करके आसन पर बैठ गया। महाराज ने पहले मेरे हाथ में पुष्प देकर पूजा-घट के ऊपर अंजली देने के लिए कहा। मैंने अंजली दी।

महाराज ने ओठ हिलाकर क्या मन्त्र कहा, उसको सुन और समझ नहीं पाया। बाद में दीक्षामन्त्र दिया। हाथ से कैसे जप करना होगा, उन्होंने दिखा दिया। प्रतिदिन निश्चित जप की संख्या बता दी और कहा, ''प्रतिदिन जप करना, एक दिन भी जिससे नागा न जाये। जितना अधिक हो सके, जप करना। काशी से १०८ वाला एक माला मँगवा लेना।'' उसके पश्चात् उन्होंने कहा, ''एक वर्ष प्रति सोमवार शिवमन्दिर जाकर भाव-भक्ति के साथ पुष्प-बिल्वपत्र से शिवपूजा करना और उस दिन हविष्यान्न भोजन करना। रात्रि में दूध या फल-मिठाई खाना। किसी से अच्छी तरह पूजा करना सीख लेना।''

तदनन्तर कहा, ''जप के साथ हृदय में ज्योतिर्मय इष्टमूर्ति का चिन्तन करना। बाद में जप नहीं करके केवल इष्टमूर्ति का ध्यान करने का अभ्यास करना। हृदय में इष्टमूर्ति को इस प्रकार बैठाना, जिससे इष्टमूर्ति का मुँह पीछे की ओर रहे – अर्थात् तुम्हारे पीठ की ओर रहे। इष्टमूर्ति का पीठ सामने की ओर रहेगा।[१] इस प्रकार हृदय में ज्योतिर्मय इष्टमूर्ति को बैठाकर ध्यान करना। ध्यान अच्छी तरह से होने पर मूर्ति भी नहीं रहेगी; एक ज्योति रहेगी, उसमें ही तुम्हारा मन लीन हो जायेगा।''

तदुपरान्त महाराज ने मुझसे कहा, ''यह फल मेरे हाथ में दो।'' (पहले से ही दक्षिणा देने के लिए फल रखा हुआ था।) मैंने फल को महाराज के हाथ में देकर प्रणाम किया। महाराज आसन से उठकर बाहर गये। मैं भी महाराज के पीछे-पीछे बाहर आया। महाराज अपने कमरे में चले गये। मैंने ठाकुर को प्रणाम करके कुछ समय तक आनन्द से जप किया।

बाद में एक समय महाराज से पूछा था, हृदय में कैसे ज्योतिर्मय इष्टमूर्ति के रूप का ध्यान करूँगा? महाराज ने कहा, ''तुम्हारे इष्ट का तो ध्यान है, उस ध्यान में जिस प्रकार रूप की बातें हैं, उसी प्रकार ध्यान करना।'' – यह कहकर महाराज ने ध्यान की पद्धति बता दी।

मेरी शुभेच्छा और प्रेम-स्नेह जानना।

इति

तुमलोगों का स्वप्रकाशानन्द

काशी सेवाश्रम, १० नम्बर वार्ड, २ अक्तूबर १९७७, सन्ध्या ४.३० बजे

मैंने स्वामी स्वप्रकाशानन्द जी के वार्तालाप का टेप किया। उसी टेप से उनकी स्मृति लिखी गई है।

राजा महाराज गम्भीर प्रकृति के थे और अध्यात्म जगत में डूबे रहते थे तथा कभी-कभी बालक की तरह हँसी-मजाक, तमाशा करते थे। वह सुनकर कोई भी बिना हँसे नहीं रह पाता था।

मैं कनखल में सम्मिलित हुआ। मैंने निश्चय किया था कि किसी ऐसे-गैरे से दीक्षा नहीं लूँगा। महाराज बहुत कम दीक्षा देते थे। मैंने एक दिन महाराज के पास जाकर दीक्षा के लिए प्रार्थना किया। उन्होंने कहा, बाद में होगा। तत्पश्चात् ५ वर्ष पश्चात् बेलूड़ मठ में मेरी दीक्षा हुई तथा मैं मद्रास मठ में भेजा गया।

१९२१ ई. में महाराज, महापुरुष महाराज, रामलाल दादा मद्रास आये तथा अक्तूबर में प्रतिमा में दुर्गापूजा की व्यवस्था किये। उन दिनों मैं महाराज की आवश्यकतानुसार सामान यथासम्भव ले आता था। महाराज ने मद्रास में स्वामी प्रभवानन्द, स्वामी अशोकानन्द और मुझे ब्रह्मचर्य दीक्षा दी।

कनखल में हरि महाराज ने मेरे जीवन को पलट दिया था। वे विवेकचूडामणि के श्लोकों की व्याख्या के समय ऐसी

(१) हृदय में इष्टमूर्ति की दो प्रकार से स्थापना करने की पद्धति है। (क) साधारणत: साधक अपने शरीर को मन्दिर मानकर हृदय में इष्ट को बैठाता है। इष्ट का मुँह और साधक का मुँह एक ही तरफ होता है। साधक की जीवात्मा देह से बाहर निकलकर आमने-सामने इष्ट का ध्यान करती है। मानव मन के लिए सब कुछ ही सम्भव है। (ख) इस पत्र (उपरोक्त परिदृश्य) में ऐसा लगता है कि साधक शरीर से बाहर न निकलकर हृदय में ही बैठकर आमने-सामने इष्ट का ध्यान करता है।

तीव्र त्याग-वैराग्यपूर्ण बातें करते कि हमलोग बहुत प्रेरित होते थे। एक बार कक्षा में स्वामी प्रज्ञानन्द थे। हरि महाराज कहते, ''केवल सुनने से नहीं होगा। स्वयं के जीवन में अभ्यास द्वारा अनुभव करो।'' प्रभवानन्दजी यह बात सुनकर कमरे में जाकर ध्यान करने लगे। हरि महाराज की कक्षा की विशेषता थी कि वे शास्त्रों का मर्मार्थ हमलोगों के सामने रखते थे। मैं कनखल में १९१३ से १९१८ ई. तक था। मेरे जीवन में जो कुछ भी आध्यात्मिक उन्नति हुई है उसके मूल में हरि महाराज ही हैं। मैंने हरि महाराज और राजा महाराज की स्मृतियाँ लिखकर रखी थी, किन्तु वे नष्ट हो गयीं।

उद्बोधन में श्रीमाँ का दर्शन किया हूँ, किन्तु कोई बातचीत नहीं हुई। शरत महाराज कहते थे, ''व्यावहारिक जगत में तुम लोग श्रीमाँ को जिस रूप में देख रहे हो, वह श्रीमाँ का वास्तविक स्वरूप नहीं है। श्रीमाँ हमलोगों को सीखाने के लिए सभी कार्य कर रही हैं। वे अपने लिए कुछ भी नहीं कर रही हैं। श्रीमाँ ने राधू का लालन-पालन किया, विवाह करवाया और उसी राधू ने श्रीमाँ के ऊपर कितना अत्याचार किया। अन्त में राधू की माया काटकर उन्होंने कहा, मेरे पास और नहीं आना।''

बेलूड़ मठ में महापुरुष महाराज का सत्संग बहुत मिला है। मैं मठ के ठाकुर भण्डार में कार्य करता था। मन्दिर से प्रसाद आने के बाद मैं पहले महापुरुष महाराज के पास प्रसाद ले जाता था। एक दिन मैं ठाकुर का प्रसाद फल-मिठाई लेकर महापुरुष महाराज के कमरे में गया, तभी सुना कि महापुरुष महाराज कह रहे हैं, ''राजा, ठाकुर का अभी भी दर्शन पाता हूँ। उनका दर्शन यदि नहीं कर पाता, तो मेरे लिए जीवन-धारण करना बहुत कष्टदायक होता।''

भक्तगण महापुरुष महाराज के लिए विविध प्रकार की सामग्री लेकर आते थे। उन्होंने मुझसे कहा था, ''भक्तों के दिये हुये सामान में से पहले थोड़ा-सा निकालकर ठाकुर को देना। इसके बारे में मुझसे कुछ पूछने की आवश्यकता नहीं।''

एक दिन आरती के पश्चात् मैं महापुरुष महाराज को प्रणाम करने गया। प्रणाम करके वापस आ रहा हूँ, तभी उन्होंने मुझे बुलाया और पूछा, ''तुमने स्वामीजी-कक्ष में प्रणाम किया है?'' मैंने कहा, ''नहीं, वहाँ पर प्रणाम नहीं किया हूँ। अभी जाकर करूँगा।'' उन्होंने कहा, ''पहले वहाँ पर प्रणाम करना, तत्पश्चात् यहाँ पर। साक्षात् शिव स्वामीजी वहाँ पर हैं।'' महापुरुष महाराज की इस बात ने मेरे मन पर अमित प्रभाव डाला था।

एक दिन ब्रह्मकुण्ड में स्नान करने के लिए गया था। वापस आने पर हरि महाराज ने पूछा, ''सुरेन, कहाँ गये थे?'' मैंने कहा, ''ब्रह्मकुण्ड में स्नान करने के लिए गया था।'' ''क्यों? दूसरे किसी स्थान पर भी तो स्नान कर सकते थे।'' ''नहीं महाराज, ब्रह्मकुण्ड बहुत पवित्र स्थल है। अनेक लोग धर्मभाव जागृत करने के लिए वहाँ पर स्नान करते हैं।'' ''क्या तुम्हारा धर्मभाव जागृत हुआ है?'' ''नहीं महाराज। फिर भी स्नान करते समय गंगा माँ को प्रणाम किया और पवित्रता हेतु प्रार्थना की। तथा भगवान शिव के कई स्तोत्रों का गायन किया।'' तभी हरि महाराज ने कहा, ''देखो, तुमने जब पवित्र ब्रह्मकुण्ड में स्नान किया है, तब तुमको उस तत्त्वचिन्तन को मन में स्मरण रखना होगा। क्यों स्नान किया? पवित्र होने के लिए। पवित्र हृदय में आत्म-तत्त्व प्रकट हो जाता है। अन्यान्य देवी-देवता का दर्शन किया, किन्तु उद्देश्य हुआ आत्मज्ञान लाभ तथा भक्तिभाव को प्रबल करके रखना। लोग पुण्यस्मृति को हृदय में धारण करके रखने के लिए तीर्थ जाते हैं।'' हरि महाराज की इन बातें से मेरे हृदय में गम्भीर प्रभाव पड़ा। तदनन्तर उस समय से जब भी ब्रह्मकुण्ड में स्नान करने के लिए जाता था, हरि महाराज की बातें स्मरण आती थीं।

ब्रह्मकुण्ड, कनखल

कभी-कभी सन्ध्या समय कनखल से हरि महाराज के साथ ब्रह्मकुण्ड घूमने जाता था। वे ऊपर खड़े रहते। मैं नीचे जाकर गंगा-स्पर्श करके हाथ में थोड़ा-सा गंगाजल लाकर महाराज को देता था। वे अपने मस्तक पर छिड़कते थे। एक दिन कहा, ''देखो, 'गंगे च यमुने चैव' मुँह से बोलने से ही नहीं होगा। आन्तरिक भाव से पवित्रस्वरूपिणी, पवित्रकारिणी माँ-गंगा से पवित्रता के लिए प्रार्थना करना।''

साधन-भजन का वास्तविक रहस्य अभ्यास के ऊपर निर्भर करता है। प्रात:काल स्नान के पश्चात्, सन्ध्या और रात्रि में नित्यनियमित जप-ध्यान करते-करते अन्तर्जगत खुल जाता है और आनन्द होता है। ठाकुर की सन्तानों का सत्संग किया हूँ, उनके अनेक उपदेश सुना हूँ, किन्तु वास्तविक बात हुआ अभ्यास। उपदेश को जीवन में लाना होगा।

देखो, हमलोग सब कुछ छोड़कर संन्यासी हुए हैं। तत्पश्चात् महावाक्यादि संन्यास मन्त्र यथासमय ग्रहण करके रख दिया है। हरि महाराज उन मन्त्रों के श्रवण, मनन और निदिध्यासन के ऊपर जोर देते थे। देखो, इस विषय में एक श्लोक है :

'नित्यं कर्म परित्यज वेदान्तः श्रवणं विना।
वर्तमानश्च संन्यासी पततैव नासंशयम्।।'

नित्यकर्म कहने का अर्थ हुआ गुरु के उपदेशानुसार जप-ध्यान करना; तत्पश्चात् वेदान्तादि शास्त्रों का श्रवण, मनन और निदिध्यासन। ये सब अभ्यास ही साधु-जीवन के पतन से रक्षा करते हैं।

तदनन्तर मुझे एक संशय हुआ। बहुतों को यह संशय होता है। मुझे दीक्षा के समय इष्ट-मन्त्र मिला और संन्यास के समय प्रेष-मन्त्र और महावाक्य मिला है। इष्ट-मन्त्र द्वैतमूलक है और महावाक्य (अहं ब्रह्मास्मि) अद्वैतमूलक। अभी कौन-सा अभ्यास करूँगा। हमलोग संन्यासी हैं, इसीलिए हमलोगों को यह प्रेष-मन्त्र और महावाक्य का ही अभ्यास करना उचित है।

इस विषय में हरि महाराज के साथ बातें हुई थीं। उन्होंने कहा, ''देखो, यह मन का स्वभाव है। हमने जो इष्ट-मन्त्र ग्रहण किया है, वह जीवन में उन्नति के लिए, इष्ट का दर्शन और उपलब्धि करने के उद्देश्य से है। इष्ट-मन्त्र का जप करके तुम्हारे जीवन में उन्नति हुई है, किन्तु उपलब्धि नहीं हुई है। अभी संन्यास ग्रहण करते समय चाहिए आन्तरिकता और तीव्र विवेक और वैराग्य। मन जब उच्च-स्तर पर रहता है, तब अद्वैत-तत्त्व – महावाक्य या स्वरूप का ध्यान का अभ्यास करना और जब मन निम्न-स्तर अर्थात् द्वैत जगत में रहता तब इष्टमन्त्र का जप और इष्ट के ध्यान का अभ्यास करना।''

देखो, द्वैत या अद्वैत कौन-सा सही है, यह संशय उपलब्धि होने पर नष्ट हो जाता है। तदनन्तर, मन की वृत्ति एक के ऊपर दृढ़ होकर रहती है। संन्यासी के लिए वेदान्त-विचार को लेकर रहना ही अच्छा है। उतराखण्ड के संन्यासियों में द्वैत के प्रति एक प्रकार का अवज्ञा का भाव रहता है, किन्तु ठाकुर के पार्षदों के भीतर वह नहीं देखा।

श्रीशंकराचार्य ने कहा :

भावाऽद्वैतं सदा कुर्यात् क्रियाऽद्वैतं न कर्हिचित्।
अद्वैतं त्रिषु लोकेषु नाद्वैतं गुरुणा सह।।

सदा अद्वैत भाव का अवलम्बन करना; कभी भी कार्य में द्वैत भाव का अवलम्बन नहीं करना। कार्य में अद्वैतबुद्धि रहने से कार्य का अनुष्ठान सम्भव नहीं होता। तीनों लोकों में अद्वैतबुद्धि रखना, किन्तु गुरु के साथ अद्वैत-भाव नहीं करना। गुरु और शिष्य के एक होने पर कभी भी ज्ञान नहीं होगा।

राजा महाराज हमलोगों को द्वैतात्मक उपदेश ही दिया करते थे। इष्ट के प्रति अनुराग, प्रेमभक्ति क्रमश: मन को अद्वैत की ओर ले जायेगा। इष्ट-मन्त्र के जप के साथ-साथ वे इष्ट का रूप तथा गुण का चिन्तन करने के लिए कहते। साधना की उन्नति नित्य-नियमित अभ्यास के ऊपर निर्भर करती है।

प्रश्न उठता है कि धर्मजीवन में रुचि और आस्वादन कैसे प्राप्त किया जाये? वह अनुभूति के ऊपर निर्भर करता है और व्याकुलता तथा भावभक्ति के होने से अनुभूति होती है। विवेक और वैराग्य चाहिए। देखो, शास्त्र कहते हैं – **अभ्यासवैराग्याभ्याम् तन्निरोधः।** इष्ट के नाम-रूप को पकड़कर साधन-भजन करते-करते आस्वादन आता है। भीतर में आनन्द होता है। मन एकाग्र हो या न हो नित्य अभ्यास करते जाओ। **(क्रमशः)**

भगवान के प्रति प्रेम व्यक्ति की आन्तरिक अनुभूति पर आश्रित होता है। भगवान के प्रति प्रेम आवश्यक है।
– श्रीमाँ सारदा देवी

आध्यात्मिक जीवन में परम आवश्यक : ईश्वर स्मरण

स्वामी सत्यरूपानन्द

पूर्व सचिव, रामकृष्ण मिशन विवेकानन्द आश्रम, रायपुर

संसार परिवर्तनशील है। हम रामकृष्ण भावधारा में भगवान की लीला में विश्वास करते हैं। पूर्वजन्म में पुण्य करने से मनुष्य-योनि मिलती है। मनुष्य के जीवन का उद्देश्य यह है कि ईश्वर के चरणों में भक्ति हो जाए। वेदान्त कहता है मनुष्य योनि मिली है, तो ईश्वर-प्राप्ति का प्रयत्न करो। हमारा जीवन तो छोटा है। मृत्यु कब आ जाए, पता नहीं। अत: मनुष्य जन्म मिला है, तो आध्यात्मिक जीवन बिताओ, भगवान की भक्ति करो। सतत भगवान का नाम-स्मरण और भक्ति करो। जीवन भर ऐसा करोगे, तो मृत्यु के समय भी भगवान की याद आयेगी, तुम्हारे मन में शुभ विचार आयेंगे।

मैं और मेरा; ये है माया। आध्यात्मिक जीवन में सत्संग करो। सत्संग करने से तुम नि:संग हो जाओगे और नि:संग होने से तुम्हारा जीवन शुद्ध-पवित्र हो जायेगा। तुम सतत भगवान के संग में रहोगे। तुमको सत्-चित्-आनन्द मिलेगा, तुम बन्धन-मुक्त हो जाओगे।

वेदान्त कहता है, ईश्वर को छोड़ बाकी सब असत्य है। एक ईश्वर ही सत्य है। हमारा शरीर असत्य है, लेकिन शरीर में रहनेवाली आत्मा सत्य है।

हम जो सोचते हैं, वैसा बन जाते हैं, इसलिए अपने विचारों पर ध्यान रखना चाहिए। मनुष्य जीवन में ही हम आत्मचिन्तन कर सकते हैं। ठाकुर के भक्त मृत्यु से नहीं डरते हैं। मृत्यु के बाद वे रामकृष्ण लोक में जायेंगे।

संसार में हम जो चाहते हैं, वह हमारे मन जैसा मिलता नहीं है। लोग अपने मन जैसा चाहते हैं, किन्तु होता भगवान के मन जैसा है। सब कुछ भला-बुरा भगवान की इच्छा से ही होता है। इसलिये भगवान ने हमें जहाँ भी रखा है, जैसा भी रखा है, उसी में हमको सन्तुष्ट रहना है। जो अपनी आत्मा में ही सन्तुष्ट है, वही आनन्द में रह सकता है। आनन्द हमारा स्वरूप है, लेकिन गलत सोच के कारण हम निरानन्द हो गये हैं। संसार के सभी कर्म करो, लेकिन मन भगवान के चरणों में ही रहे।

मृत्यु हमारे जीवन का अन्त नहीं है। जब तक जी रहे हैं, तब तक सत्कर्म करें, दूसरों को आनन्द में रखने का प्रयत्न करें और सबसे प्रेम करें। ईश्वर को अपना समझकर सतत ईश्वर का स्मरण करते रहें। आध्यात्मिक जीवन के लिये यह परम आवश्यक है।

मृत्यु के बाद यहीं सब कुछ छूट जायेगा, लेकिन हमारे साथ केवल सत्संग, सत् चिन्तन, भगवान का चिन्तन, ये अच्छे कर्म ही साथ जायेंगे। सारे वेदान्त का सार यही है कि पूर्व जन्मों के शुभ कर्मों से हमें मनुष्य जन्म मिला है, तो इसी जन्म में हमें ईश्वर की प्राप्ति करनी है। हम मनुष्य हैं, तो हममें विवेक की शक्ति है। विवेक से हमें अच्छे और बुरे का विचार करना है। हम इस जन्म में भटके हुए हैं और हम आनन्द को खोज रहे हैं। आनन्द तो हमारे पास में ही है। जगत की व्यर्थता और परमार्थ की सार्थकता को देखें। हमें विवेक का उपयोग करके सत्-चित्-आनन्द की अनुभूति करनी है।

जो परम आनन्द की अनुभूति करना चाहते हैं, उन सत्संग करनेवाले साधक-साधिकाओं का जीवन शुद्ध, पवित्र होना चाहिये। पवित्रता रखने के लिए अपनी माँ का चिन्तन करना चाहिये। श्रीमाँ सारदा की आँखों की ओर देखकर उनसे प्रार्थना करना। श्रीमाँ में समर्पण है, पवित्रता है, सेवाभाव है। इसीलिए सतत उनके चिन्तन से मन पवित्र और भगवान की ओर जायेगा।

हम कितना भी नाम जप करें, तपस्या करें, लेकिन सम्बन्धियों के लिए मन में मोह आ जाता है, जो बन्धन का कारण है। जीवन में सुख-दुख आये, तो हम शान्तिपूर्वक सहन करें। भगवान का नाम जप करते-करते दुख नहीं रहेगा और मन में शान्ति का अनुभव होगा। ○○○

तुलसी तत्त्व चिन्तन

लेखक – डॉ. सुशील कुमार पाण्डेय 'साहित्येन्दु',
प्रकाशक – कौण्डिन्य साहित्य सेवा समिति, पटेल नगर कादीपुर, सुलतानपुर (उ.प्र.)
पृष्ठ –२९६, मूल्य – ४५०/-

'तुलसी तत्त्व चिन्तन', रामचरितमानस में तुलसी द्वारा जो तात्त्विक चिन्तन किया गया है, उसकी गहराई से विवेचना व समालोचना करती हुई पुस्तक है। इस पुस्तक के लेखक ने तुलसी की विराट चेतना और समन्वय को नमन करते हुए आदरांजलि के रूप में उन्हें ही समर्पित की है। इसके अलावा लेखक डॉ. राममनोहर लोहिया के 'रामायण मेला' के आयोजन से जो रामरस धारा का प्रवाह समाज में हुआ, उसका व्यापक प्रभाव स्वीकार करते हैं। सुशील कुमार जी बचपन से ही श्रीराम की कथा और विभिन्न माध्यमों से रामकथा की प्रस्तुति में अपना चित्त व भाव रखते थे और उनके जीवन में उन्हें कई ऐसे विद्वानों का सान्निध्य मिला, जिनकी आसक्ति रामचरित में थी, उन्हीं से प्रेरित होकर 'साहित्येन्दु' जी ने इस पुस्तक का लेखन किया, जो आगे सुधी पाठकों का मार्गदर्शन करेगी।

पुस्तक के आरम्भ में ही उन्होंने गोस्वामीजी के कतिपय कल्पित चित्रों को साभार पाठकों के समक्ष प्रस्तुत किया है। साथ ही डॉ. लोहिया के जीवन से जुड़े स्मारकों व स्मृतियों के चित्रों को भी सहेजकर अपनी पुस्तक में प्रस्तुत किया है, जिससे पाठकों का हृदय इस पुस्तक से अधिक जुड़ाव का अनुभव करता है।

सुलतानपुर गौरव में वे सुलतानपुर के प्रमुख विद्वानों, चिन्तकों और ख्यातिलब्ध व्यक्तियों का चित्र व परिचय प्रस्तुत करते हैं। 'साहित्यन्दुजी' ने मानस में साधु एवं संत का जहाँ-जहाँ भी वर्णन आया है, उसे बड़ी बारीकी से प्रस्तुत व व्याख्यायित किया है। गोस्वामीजी की दृष्टि में साधु एवं संत एक ही अर्थ के वाची हैं। स्वयं राम नारदजी के प्रश्न के उत्तर में कहते हैं –

मुनि सुन साधुन्ह के गुन जेते।
कहि न सकहिं सारद श्रुति तेते।। ३/४५/८

वे विभिन्न उद्धरणों से साधुओं के गुण बताते हैं, साथ ही, राम, भरत, विभीषण, हनुमान आदि को उनके गुणों और कर्मों के कारण बार-बार क्यों साधु या संत कहा गया, यह भी स्पष्ट करते हैं, जिससे रसिक पाठकों को यह संकल्पना स्पष्ट हो जाती है कि वस्त्रों से नहीं, जीवन में सद्गुणों और सात्त्विक भावों से कोई भी साधु बन सकता है। जिसमें भी करुणा परदुखकातरता है, जो धर्म से कभी विचलित न हो, जिसका अनुराग प्रभु के श्रीचरणों में हो, वे सब संत कहलाने योग्य हैं।

सुशील कुमार जी बताते हैं कि राम के शील, रूप और गुण के कारण उनके बैरी भी राम की बड़ाई अर्थात् प्रशंसा करते हैं। उन्होंने रामचरितमानस और रामायण के विभिन्न पात्रों का उल्लेख करते हुए बताया है कि राम अपने मनुष्य अवतार में इतने विनयशील, शान्त और उदारमना थे कि हितैषियों के साथ-साथ शत्रुओं को भी प्रिय थे। इससे पाठकों को प्रेरणा भी मिलती है कि हम अपने व्यवहार व आचार-विचार से लोगों के हृदय में स्थान बना सकते हैं।

'अस तपु काहूँ न कीन्ह भवानी' में लेखक तप की महिमा का बखान करते हैं। मनु-शतरूपा की जरावस्था में की गई तपस्या व भरत की राम के वियोग में की गई तपस्या और स्वयं राम-सीता-लक्ष्मण की वनवास के समय की गई तपस्या का तुलनात्मक वर्णन करते हुए साहित्येन्दुजी तुलसी के कथन को ही सही व श्रेष्ठ सिद्ध करते हैं कि भवानी जैसा तप किसी दूसरे ने नहीं किया।

भरत के संयम का और उनकी वाणी में साक्षात् सरस्वती के लालित्य का वर्णन विभिन्न दोहों के माध्यम से 'भरत भारती मंजु मराली' में किया गया है। उदाहरण देखिए –

तात भरत तुम्ह सब बिधि साधू।
राम चरन अनुराग अगाधू।
बादि गलानि करहु मन माहीं।
तुम्ह सम रामहि कोउ प्रिय नाहीं।। २/२०४/७-८

रामचरित मानस में 'बुध' शब्द का प्रयोग किस अर्थ व किस उद्देश्य से किया गया है, इसकी बड़ी सुन्दर समीक्षा साहित्येन्दु जी ने की है। उदाहरणार्थ वेद उन्हें कदापि बुध नहीं कहता, जो अचानक कार्य प्रारम्भ कर बाद में पछताते हैं। अत: यहाँ बुध का अर्थ बुद्धिमान व दूरदर्शी हुआ।

ऐसे ही रामराज्य की परिकल्पना में 'अबुधहीनता' भी एक विशेषता होगी। अर्थात् वहाँ कोई अबोध न होगा, सभी बुद्धिशाली होंगे।

लौकिक संस्कृत साहित्य में रचे गए रामायण को वाल्मीकिजी ने बृहद् आयाम प्रदान किया है, कालिदास ने रघुवंशम् में रघुकुल के राजाओं का शास्त्रीय वर्णन किया

है। जबकि तुलसीदासजी ने आधुनिक सन्दर्भों में रामकथा का एक नए दृष्टिकोण से पुन:सृजन किया। वे निषादराज से राम और बाद में भरत के मिलन के दृश्य को खड़ा करके जाति-पाँति का विरोध करते प्रतीत होते हैं।

ऐसे ही जटायु का प्रसंग प्राणीमात्र के प्रति संवेदना को जगाता है, साथ ही उसकी गति में सुधार के माध्यम से यह भी संदेश देते हैं कि कोई भी रामभक्ति के माध्यम से अपना जीवन-मरण सुधार सकता है। उन्होंने स्व. दूधनाथ शुक्ल 'करुण' की कुछ पंक्तियाँ भी उद्धृत की हैं, जो उनके व्यापक अध्ययन का प्रमाण है –

तुलसी न आते यदि प्रेम का प्रकाश लिए,
सदियों से सोये हुए देश को जगाता कौन?
नाना सम्प्रदाय पंथ मत मतवालों के
कहै 'करुणेश' कवि कलह मिटाता कौन?

उपरोक्त पंक्तियों से तुलसी की प्रासंगिकता प्रमाणित होती है।

तुलसी की भक्ति चेतना पर विस्तार से प्रकाश डालते हुए डॉ. सुशील बताते हैं कि उनकी विराट भक्ति-चेतना राम से प्रारम्भ होकर जन-जन तक पहुँचती है। उनकी भक्ति में विनम्रता, मानवता और आचरण की शुद्धता पर अधिक बल दिया गया है।

तुलसी की दृष्टि में वह धन्य है, जो परोपकारी व परमात्मानुरागी है। ऐसे ही तुलसी ने किनको-किनको, कब-कब धन्य माना उसका अन्वेषण 'साहित्यन्दु' जी ने किया है। मूलत: जो मुनि हैं, जो राम से सम्बद्ध हैं, जो अयोध्या के वासी हैं, जिन्हें भी राम के चरणों का अनुराग प्राप्त है, जो भी भारत की पवित्र मिट्टी में जन्म लिया, वे सब धन्य हैं।

इसके अतिरिक्त समाज में जिन सोलह संस्कारों को मान्यता प्राप्त है, उनके विधान मानस में किस प्रसंग में आए हैं, उसका भी वर्णन इस पुस्तक में किया गया है।

इसी प्रकार धर्म का विस्तृत अर्थ बताकर तुलसी ने धर्म के संकुचित अर्थ से लोक को मुक्त करने का प्रयास किया है। क्षमा, दया, करुणा, मृदुभाषण, आदि को उन्होंने धर्म माना है। कर्तव्यपरायणता को वे धर्म मानते हैं।

मानस में समाज के लिए क्या दर्शन प्रस्तुत किया गया है, इस पर एक लम्बा आलेख साहित्येन्दु जी लिखते हैं, जिसे हर पाठक को पढ़ना व जीवन में उतारना चाहिए। आगे सुशीलजी तुलसी काव्य से अनुशीलन योग्य शिक्षा पर पाठक का ध्यानाकृष्ट कर रहे हैं। लोहियाजी के प्रभाव से वे श्रीराम को एक जननायक की तरह प्रस्तुत करते हैं, जो राष्ट्रीय सौमनस्य वृद्धि हेतु परम आवश्यक है। मानव में वर्ण-व्यवस्था और आश्रम व्यवस्था पर कितने विचारशील ढंग से तुलसी की दृष्टि जाती है, यह भी प्रतिपादित किया गया है। कुल मिलाकर जिस व्यापक चेतना दृष्टि से तुलसी ने रामचरितमानस को पूर्ण किया है, उसी विराट राम भावनामृत से साहित्येन्दु जी ने उनका तात्त्विक चिन्तन किया है। इससे नि:संदेह पाठक भी मानस के नए आयामों से परिचित होता है व स्वयं में एक सकारात्मक परिवर्तन पाता है। उन्होंने कुछ पत्र भी पत्र-वीथिका में पाठक के समक्ष पेश किए हैं, जिनसे उनके प्रति औरों के विचारों का भी पता चलता है।

इस पुस्तक का सबसे महत्त्वपूर्ण पाठ है – 'मानस के काग'। काग जैसे पक्षी को भी श्रीराम भावनामृत के पान से कागभुसुण्डी के रूप में मानस का प्रमुख वक्ता बनने का सौभाग्य प्राप्त हुआ है, तो मानव तो आसानी से इस पद को पा सकते हैं। रामकृपा से मानव के जीवन के सभी अवगुण जैसे कि अहंकार, भय, लोभ, काम, आदि समाप्त हो जाते हैं और वे विनम्रता में बदल जाते हैं। जैसे काग ने श्रीराम के बाल-लीलाओं का दर्शन किया और उनका कृपा पात्र बनकर आशीष में अपने लिए निष्काम भक्ति माँगी। श्रीराम ने उसे ये वरदान भी दिया व अपना सिद्धान्त भी बताया। साथ ही उसे आशीष दिया कि तुझे कभी काल व्यापेगा नहीं। इसीलिए काग राममहिमा का गुणगान कर योग्य हुआ, साथ ही उसे अनेक जन्मों का स्मरण भी रहने लगा। काग ही कलियुग का वर्णन भी करता है।

इस पुस्तक में कालिदास एवं तुलसीदास की दृष्टि में एक तुलनात्मक विमर्श के माध्यम से दृष्टि-भेद के अनुसार दशरथ का वर्णन किया गया है। इसमें चिन्तन के स्तर और भौतिक स्तर पर बड़े गहरे बिन्दु उठाए गए हैं।

निष्कर्षत: तुलसी तत्त्व चिन्तन न केवल रामचरितमानस का तात्त्विक विश्लेषण है, अपितु इसमें समाज और धर्म का गहरा विश्लेषण है और कई आवश्यक विमर्श छिपे हैं। यह अत्यन्त गम्भीर व पठनीय पुस्तक है। इसे हर सुधी पाठक को पढ़ना चाहिए। इसमें आध्यात्मिक व साहित्यिक पिपासा शान्त होगी। इस उत्तम कृति के लिये लेखक धन्यवाद के योग्य हैं। ○○○

समीक्षक – डॉ. कल्पना मिश्रा, सहा. प्रा. हिन्दी,
शासकीय महिला महाविद्यालय, रायपुर

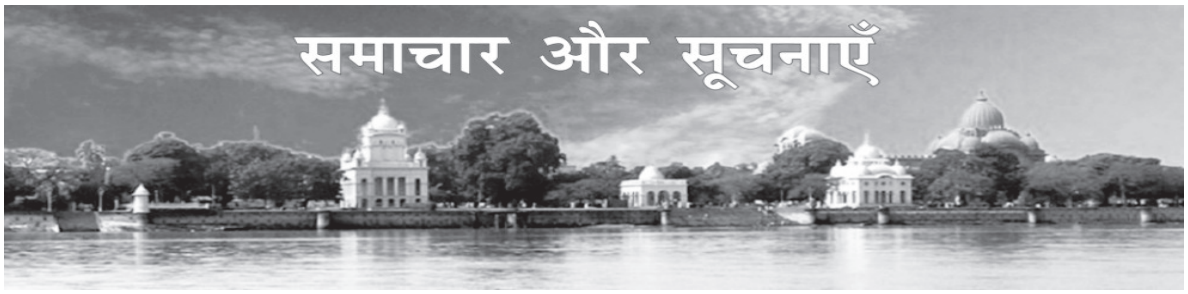

पूज्यपाद स्वामी गौतमानन्द जी महाराज का छत्तीसगढ़ प्रवास

रामकृष्ण मठ और रामकृष्ण मिशन के उपाध्यक्ष और रामकृष्ण मठ, चेन्नई के अध्यक्ष स्वामी गौतमानन्द जी महाराज ने २१ अगस्त, २०२२ से ७ सितम्बर, २०२२ तक छत्तीसगढ़ में प्रवास किया। इस दौरान उन्होंने रामकृष्ण मिशन विवेकानन्द आश्रम, रायपुर; रामकृष्ण मिशन आश्रम, नारायणपुर; रामकृष्ण मिशन, बिलासपुर में भक्तों को दीक्षा प्रदान की।

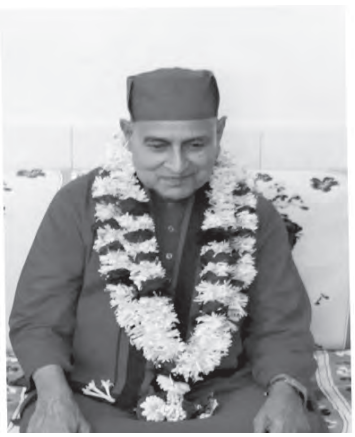

रामकृष्ण मिशन विवेकानन्द आश्रम, रायपुर में पूज्य महाराज ने ३१ अगस्त और १ सितम्बर, २०२२ को दीक्षा प्रदान की। १ सितम्बर को आश्रम के सत्संग भवन में महाराजजी ने 'श्रीरामकृष्ण के उपदेश और आधुनिक युग' पर प्रवचन दिया।

वृन्दावन में युवा सम्मेलन का आयोजन हुआ

१० अगस्त, २०२२ को **रामकृष्ण मिशन सेवाश्रम, वृन्दावन** में भारत की स्वतन्त्रता की ७५वीं वर्षगाँठ और रामकृष्ण मिशन की १२५वीं वर्षगाँठ के उपलक्ष्य में 'आजादी का अमृत महोत्सव' और स्वामी विवेकानन्द को समर्पित एक भव्य कार्यक्रम आश्रम के विवेकानन्द हॉल में आयोजित किया गया। दीप प्रज्वलन

के बाद आश्रम के ब्रह्मचारियों ने वैदिक मन्त्रपाठ किया। कार्यक्रम की अध्यक्षता उज्जैन आश्रम के सचिव स्वामी राघवेन्द्रानन्द जी ने की। आश्रम के सचिव स्वामी सुप्रकाशानन्द जी ने सबका स्वागत किया। स्वामी गीतेशानन्द जी, स्वामी दिव्यतत्त्वानन्द जी, स्वामी ओजोमयानन्द जी ने व्याख्यान दिया। युवा सम्मेलन में कुल ३६७ विद्यार्थियों और २९ शिक्षकों ने भाग लिया। आश्रम ने विभिन्न प्रतियोगिताओं का भी आयोजन किया था, जिसमें १७ शिक्षण संस्थानों ने भाग लिया था। इसमें ९६ विद्यार्थियों ने प्रथम और द्वितीय पुरस्कार और ३०६ विद्यार्थियों को सान्त्वना पुरस्कार प्रदान किया गया। कुल ६९७ विद्यार्थियों को प्रमाण पत्र दिया गया।

विवेकानन्द विद्यापीठ, कोटा, रायपुर में कृष्णजन्माष्टमी मनाया गया

१८ अगस्त, २०२२ को अपराह्न ३ बजे से विवेकानन्द विद्यापीठ, कोटा, रायपुर में श्रीकृष्णजन्माष्टमी की पूर्व सन्ध्या पर 'श्रीकृष्ण चरित के विविध आयाम' पर परिसंवाद आयोजित किया गया। इसमें विवेकानन्द विद्यापीठ के सचिव डॉ. ओमप्रकाश वर्मा ने 'श्रीकृष्ण की अनासक्ति', शासकीय योगानन्दम् महाविद्यालय, रायपुर की सहा. प्राध्यापिका डॉ. सुभद्रा राठौर ने 'श्रीकृष्ण का प्रेम', शा. महाविद्यालय, आरंग की पूर्व प्राचार्या डॉ. शोभा निगम ने 'श्रीकृष्ण की राजनीति', दुर्गा महाविद्यालय, रायपुर की दर्शनशास्त्र विभागध्यक्ष डॉ. रंजना शर्मा ने 'श्रीकृष्ण का जनकल्याण', शा. संस्कृत महाविद्यालय, रायपुर के सहा. प्राध्यापक डॉ. सत्येन्दु शर्मा ने 'श्रीकृष्ण का शौर्य' विषय पर व्याख्यान दिया। सभा की अध्यक्षता 'विवेक ज्योति' के सम्पादक स्वामी प्रपत्त्यानन्द ने की। अतिथियों का स्वागत मानव प्रकर्ष संस्थान के उप-सचालक, डॉ. समीर ठाकुर और मंच संचालन डॉ. प्रीति विश्वकर्मा ने किया। विद्यापीठ के संगीत शिक्षक श्री रवीश कालगाँवकर ने 'मुरलिया बाजे यमुना तीर' नामक सुन्दर भजन प्रस्तुत किया। अन्त में संस्था के द्वारा अतिथियों को स्मृति-चिह्न प्रदान किया गया।

रामकृष्ण मिशन सेवाश्रम

स्वामी विवेकानन्द पथ, पो. बेला, मुजफ्फरपुर – 842002, बिहार

फोन : 0621-2272127, 2272963

ई-मेल : - <rkm.muzaffarpur@gmail.com>,

<muzaffarpur@rkmm.org>,<Website : www.rkmsmuzaffarpur.org>

निवेदन

प्रिय मित्रो !

प्रतिवर्ष जल भराव की समस्या के कारण आश्रम की गतिविधियाँ विशेष रूप से बाधित हो रही हैं । विगत दो वर्षों में विषम परिस्थितियों के कारण चिकित्सकीय एवं शैक्षणिक सेवाएँ नियमित नहीं चल सकीं एवं उन्हें बन्द करना पड़ा, जिससे आश्रम को विकट समस्याओं का सामना करना पड़ा । आश्रम पाँच महीनों तक जल-मग्न रहा । चिकित्सकीय सेवाएँ पूर्ण रूप से बन्द करनी पड़ी । आश्रम के चिकित्सकीय कर्मियों को चिकित्सालय भवन में स्थानान्तरित करना पड़ा, कई लीची के पौधे सूख गये, आश्रम की चारदीवारी कई स्थानों से क्षतिग्रस्त हो गयी ।

अतः आपसे निम्नांकित कार्यों में सहयोग प्रदान करने का अनुरोध है ।

	आवश्यकताएँ	राशि
1.	मिट्टी भराई	05 लाख
2.	प्रांगण सड़क निर्माण	30 लाख
3.	चारदीवारी निर्माण	30 लाख
4.	सहायक चिकित्सा भवन का निर्माण	04 करोड़
5.	चिकित्सकीय उपकरण	60 लाख

खातेदार का नाम - रामकृष्ण मिशन सेवाश्रम, मुजफ्फरपुर
बैंक का नाम - स्टेट बैंक ऑफ इंडिया
खाता संख्या - 10877071752
IFSC कोड - SBIN0006016

आपके और आपके परिजनों के लिए प्रभु से प्रार्थना सहित

प्रभु सेवा में आपका
स्वामी भावात्मानन्द
(सचिव)